भारतीय लोक-कला-ग्रन्थावली, ग्रन्थ-संख्या ८

राजस्थानी लोकोत्सव

लेखक
गींडाराम वर्मा

प्रकाशन विभाग
भारतीय लोक-कला मण्डल
रेजिडेन्सी भवन : जयपुर प्रिन्टर्स भवन
उदयपुर : जयपुर
देवीलाल सामर
संपादक

भारतीय लोक-कला ग्रन्थावली

[भारत की विविध जनपदीय लोक-कलाओं जैसे नृत्य, संगीत, चित्र, अलंकरण, लोकगीत और लोक-जीवन आदि से सम्बन्धित; अधिकारी विद्वानों और कलाकारों द्वारा प्रस्तुत; अन्वेषण एवं अध्ययन-पूर्ण ग्रन्थ-प्रकाशन का अभिनव आयोजन।]

सञ्चालक

देवीलाल सामर

•

सम्पादक

पुरुषोत्तमलाल मेनारिया

ग्रन्थाङ्क ८

राजस्थानी लोकोत्सव

प्रथम संस्करण

१९५७ ई०

मूल्य—दो रुपया

प्रकाशन विभाग

भारतीय लोक-कला मण्डल, उदयपुर

मुद्रक—सोहनलाल जैन, जयपुर प्रिन्टर्स, जयपुर

सञ्चालक की ओर से

राजस्थानी लोकोत्सव पर आवश्यक सामग्री प्रस्तुत करते हुए परम हर्ष है। मेले और त्यौहार किसी भी देश और जाति के सांस्कृतिक जीवन के सच्चे प्रतीक होते हैं। उनके विशद अध्ययन के बिना सांस्कृतिक अध्ययन अधूरा होता है। भारतीय लोक-कला मंडल के खोज-विभाग की शोध-संबंधी प्रवृत्तियों में मेले, उत्सव और त्यौहारों का अध्ययन एक महत्त्वपूर्ण कार्य है और इसके लिये हमारे कार्यकर्ताओं को स्वयं अनेक मेलों में सम्मिलित होकर अपने अध्ययन को तथ्यपूर्ण बनाना पड़ा है। श्री गौंडाराम वर्मा हमारे खोज-विभाग के प्रमुख कार्यकर्ता रहे हैं। भारतीय लोक-कला मंडल के खोज विभाग में एकत्रित इस विषय की सामग्री को सकलित और व्यवस्थित करके उन्होंने स्वयं के तद् विषय अध्ययन से इस प्रकाशन को तैयार किया है।

हमें अपने देश के लोकोत्सवों का विस्तृत अध्ययन विभिन्न पहलुओं से करना है जिससे इनका लाभ जनता को अधिक से अधिक मिल सके और लोकोत्सवों को नवीन दृष्टिकोण से नवीन उत्साह के साथ आयोजित किया जा सके।

—देवीलाल सामर

भारतीय लोक-कला ग्रन्थावली

[भारत की विविध जनपदीय लोक-कलाओं जैसे नृत्य, संगीत, चित्र, अलंकरण, लोकगीत और लोक-जीवन आदि से सम्बन्धित; अधिकारी विद्वानों और कलाकारों द्वारा प्रस्तुत; अन्वेषण एवं अध्ययन-पूर्ण ग्रन्थ-प्रकाशन का अभिनव आयोजन।]

सञ्चालक–देवीलाल सामर • सम्पादक–पुरुषोत्तमलाल मेनारिया

प्रकाशित ग्रन्थ

१. लोक-कला निबन्धावली, भाग–१ : राजस्थानी लोक-कलाओं जैसे गवाई नृत्य, घूमर और झूमर, सांझी, लोकनाटक-ख्याल, भूमि-अलंकरण आदि से सम्बन्धित अधिकारी विद्वानों द्वारा प्रस्तुत खोज और अध्ययनपूर्ण सामग्री। १८×२२/८ आकार के १२८ पृष्ठ। मूल्य ३) रु.। अप्राप्य।

२. लोक-कला निबन्धावली, भाग–२ : मध्यभारतीय आदिवासियों, लोकगीतों, लोकवार्ताओं, लोक-अलंकरण-कलाओं, लोकोक्तियों, पहेलियों आदि से सम्बन्धित अधिकारी विद्वानों द्वारा प्रस्तुत खोज और अध्ययन-पूर्ण सामग्री। १८×२२/८ आकार के १३२ पृष्ठ। मूल्य ३) रुपया। अप्राप्य।

३. लोक-कला निबन्धावली, भाग–३ : राजस्थानी लोक-कलाओं, लोक-गीतों, लोकानुकृतियों आदि से सम्बन्धित अधिकारी विद्वानों द्वारा प्रस्तुत खोज और अध्ययन-पूर्ण सामग्री। १८×२२/८ आकार के ११० पृष्ठ। मूल्य ३) रुपया।

४. राजस्थान के लोकानुरंजन : राजस्थानी लोक-जीवन में प्रचलित नृत्य और अभिनय, आदि का खोज और अध्ययनपूर्ण सचित्र विवेचन। लेखक श्री देवीलाल सामर, सहायक श्री गोडाराम वर्मा। मूल्य डेढ़ रुपया।

५. राजस्थान का लोक-संगीत : राजस्थानी लोक-संगीत का खोज और अध्ययन पूर्ण विवेचन। लेखक सुप्रसिद्ध विद्वान और कलाकार श्री देवीलाल सामर हायक श्री गोडाराम वर्मा। १८×२२/८ आकार के १५२ पृष्ठ। मूल्य तीन रुपया।

६. राजस्थानी लोक-नृत्य : राजस्थानी लोक-नृत्यों का अध्ययनपूर्ण सचित्र विवेचन। लेखक-सुप्रसिद्ध विद्वान और कलाकार श्री देवीलाल सामर, सहायक श्री गोडाराम वर्मा। १८×२२/८ आकार के ५६+२० पृष्ठ। मूल्य दो रुपया।

७. राजस्थानी लोक-नाट्य : राजस्थान मे प्रचलित लोक-नाटकों का अध्ययनपूर्ण विवेचन। लेखक-सुप्रसिद्ध विद्वान और कलाकार श्री देवीलाल सामर। सहायक श्री गोडाराम वर्मा। १८×२२/८ आकार ७० पृष्ठ। मूल्य दो रुपया।

८. राजस्थानी लोकोत्सव : राजस्थान मे प्रचलित त्योहारों और उत्सवों का अध्ययन पूर्ण विवेचन। लेखक श्री गोडाराम वर्मा। १८×२२/८ आकार के ६४ पृष्ठ। मूल्य दो रुपया।

● लोक-कला त्रैमासिक के ग्राहक बनिये। वार्षिक मूल्य ६) रु० ●

प्रकाशन विभाग

भारतीय लोक-कला मण्डल, उदयपुर

भूमिका

लोकोत्सव सम्बन्धित देशीय संस्कृति के प्रतीक होते हैं क्योंकि प्रत्येक लोकोत्सव के साथ किसी न किसी प्रकार की धार्मिक, ऐतिहासिक अथवा सामाजिक विचारधारा रहती है और सम्बन्धित लोक-गीत, लोक-कथाएँ, नृत्य, वेश-भूषा, अलंकरण, साज-सज्जा, रीति-रिवाज, खेल-तमाशे आदि की आयोजना होती है। किसी भी देश की संस्कृति को समझना हो तो उसके लोकोत्सवों का दर्शन और अध्ययन करना चाहिए। सामान्य अवसरों पर सांस्कृतिक उपादान प्राय: बिखरे और कहना चाहिए कभी-कभी अदृश्य रहते हैं किन्तु लोकोत्सवों में उनके सम्मिलित दर्शन सुलभ हो जाते हैं मानों उनकी एक सजीव प्रदर्शनी लग गई हो।

लोकोत्सवों के प्रत्यक्ष दर्शन और अध्ययन से हम सम्बन्धित राष्ट्र एवं जनता की वास्तविक स्थिति की जानकारी भी प्राप्त कर सकते हैं। उन्नत राष्ट्र अपने लोकोत्सवों में सम्पूर्ण उत्साह और उल्लास से भाग लेते हैं किन्तु पिछड़े हुए राष्ट्र लोकोत्सवों में केवल रस्म पूरी करने तक ही सीमित रहते हैं। यदि कोई देश पराधीन हुआ तो सम्बन्धित सरकार उस देश के लोकोत्सवों में विशेष रुचि नहीं प्रकट करती किन्तु स्वाधीन देश की सरकारें जन-भावना का आदर करती हुई लोकोत्सवों के आयोजन में पूर्ण उत्साह प्रकट करती हैं।

हमारे लोकोत्सवों की उत्पत्ति वास्तव में अवसर विशेष पर प्रकट होने वाले जन-समूह के आनन्दोल्लास से हुई है। धीरे धीरे इन उत्सवों के साथ धार्मिक अथवा ऐतिहासिक भावनाएँ जुड़ गईं और इनका विकास होता गया। सामूहिक आनन्दोल्लास के अवसर ऋतु परिवर्तन, नई फसल का पकना, सगाई, विवाह, गौना, सन्तानोत्पत्ति होना और स्थान विशेष पर लगे मानव-समूहों के मेलों से मिलते रहे हैं। ऋतु-

परिवर्तन होने पर वातावरण में सहज ही आनन्द का संचार हो जाता है क्योंकि ऐसी अवस्था में ग्रीष्म, वर्षा या सर्दी की अति से छुटकारा मिलता है और कुछ भिन्न ही स्थिति का आनन्दानुभव होने लगता है। जैसे दीपावली शरद ऋतु के आगमन पर और होली ग्रीष्म के आगमन पर आयोजित की जाती है। हमारा देश कृषि-प्रधान है इसलिये नई फसल का अन्न प्राप्त कर आनन्द का अनुभव करना जनता के लिये स्वाभाविक ही है। हमारी जनता सियालू फसल प्राप्त कर दीपावली और उन्हालू फसल प्राप्त कर होलीकोत्सव की आयोजना पूर्ण उत्साह से करती है। सगाई, विवाह, गौना और सन्तानोत्पत्ति आदि के अवसर भी सम्बन्धित व्यक्तियों के लिये आनन्ददायक होते हैं इसलिए ऐसे अवसर भी उत्सवमय हो जाते हैं। प्राकृतिक, धार्मिक अथवा ऐतिहासिक महत्त्व के किसी स्थान में अवसर विशेष पर मेलों में लोग एकत्रित होते हैं तो स्वभावतः उनका हर्षोल्लास नृत्य, गीत आदि विविध रूपों में फूट पड़ता है। इस प्रकार लोकोत्सवों को हम तीन भागों में बाँट सकते हैं–(१) होली, दीपावली, तीज, गणगौर आदि त्यौहार, (२) विवाह, जन्म, आखेट, रामनवमी, जन्माष्टमी, प्रतापजयन्ति, गणतन्त्रदिवस, स्वाधीनतादिवस आदि सामाजिक, धार्मिक, ऐतिहासिक उत्सव, और (३) प्राकृतिक, धार्मिक, ऐतिहासिक अथवा औद्योगिक स्थानों पर लगने वाले मेले। कभी-कभी त्यौहार, उत्सव और मेले तीनों का अथवा इनमें से दो का सम्मिलित रूप भी होता है।

राजस्थान एक सुविस्तृत प्रदेश है। यहां के प्राकृतिक वातावरण में पर्याप्त विभिन्नता है क्योंकि इस प्रदेश में सुविस्तृत मरुभूमि, हरी भरी घाटियों, उपजाऊ मैदानों, ऊंची पहाड़ियों, लहराते सरोवरों और वेगवती नदियों का समावेश हुआ है। राजस्थान का इतिहास अत्यन्त प्राचीन और गौरवमय है। राजस्थान में कई महापुरुष और वीराङ्गनाएँ हो गई हैं जिनकी स्मृति में लोकोत्सव आयोजित किये जाते हैं। राजस्थान में विभिन्न मानव-वंशों और जातियों का भी समावेश है। इन कारणों से राजस्थानी लोकोत्सवों में जितनी विभिन्नताओं के दर्शन होते हैं, संभवतः किसी अन्य प्रदेश के लोकोत्सवों में नहीं।

राजस्थानी लोकोत्सवों की दूसरी विशेषता यह है कि यहाँ प्रत्येक अवसर के अनुरूप नृत्यों, गीतों, कथाओं, वेश-भूषाओं, आभरणों,

ज-सज्जाओं, खान-पान, क्रीड़ा आदि का प्रचलन है। यहाँ तक कि
वों के आधार पर भी हम राजस्थानी नृत्यों, गीतों, कथाओं,
करणों और साज-सज्जाओं आदि का वर्गीकरण कर सकते हैं।

प्रत्येक उत्सव के लोकगीत भारी संख्या में प्रचलित हैं जिनका
गृह-गायन उत्सव के कई दिन पूर्व से प्रारंभ हो जाता है और
ससे सारे वातावरण में सरसता का संचार हो जाता है। इन गीतों
अवसर के सर्वथा अनुकूल तर्जों का समावेश हुआ है। जिस प्रकार
स्त्रीय संगीत में समय के अनुकूल रागों का प्रयोग होता है, लोक-
गीत में भी उत्सव के सर्वथा अनुकूल विधि-विधानों का समावेश
ता है।

राजस्थानी लोक-नृत्यों की विविध छटाएँ मुख्यतः होलीकोत्सव
देखी जा सकती हैं। होलीकोत्सव पर ही राजस्थान के विभिन्न
गों में गींदड़, लूर, घूमर, गैर और डांडिया आदि नृत्यों का संचार
ता है। राजस्थान के कुछ भागों में "गरबा" नृत्य नवरात्री महोत्सव
आयोजित किया जाता है। मुख्यतः भील और मीणे स्त्री-पुरुष
म्मिलित रूप से अपने उत्सवों में नाचते हैं। कई राजस्थानी जातियों
विवाह पर लौटते हुए गीत और नृत्य के साथ ही रास्ता तय किया
ता है। कई विवाहों और मेलों में स्त्री पुरुष बारी-बारी से अपने
त्य प्रदर्शित करते हैं।

धार्मिक उत्सवों के अपने व्रत होते हैं जिनका पालन मुख्यतः
र्मिक वृत्ति की स्त्रियाँ करती हैं। प्रत्येक व्रतोत्सव से सम्बन्धित
जस्थानी लोककथाओं का जनता में प्रचार है। किसी किसी उत्सव की
क से अधिक लोक-कथाएँ भी मिलती हैं। सातों वारों की, विशेष
हीनों और तिथियों की, धार्मिक त्यौहारों की, सामाजिक और ऐति-
सिक मेलों आदि की सैंकड़ों ही लोककथाएँ राजस्थानी भाषा में
चलित हैं। उत्सव सम्बन्धी लोककथाएँ मुख्यतः प्रश्नात्मक हैं और
नमें प्रत्येक उत्सव की धार्मिक दृष्टि से विशेषता बताई गई है
और सम्बन्धित व्रत-पालन से होने वाले पुण्य-लाभ की ओर स्पष्ट
[illegible] किया गया है।

[illegible] ने राजस्थान के रंगों का [illegible] किया है।
[illegible] राजस्थान में मिलती है वैसी [illegible]

में अन्यत्र दुर्लभ है। लोकोत्सवों पर रंगीन वस्त्रों और साज-सज्जाओं की अनोखी छटा बड़ी लुभावनी लगती है। प्रत्येक त्यौहार पर विशेष रंगीन वस्त्र प्रयोग में आते हैं। जैसे होली पर बसन्तिये, फागणिये, छपाई, बंधाई और रंगाई के वस्त्र स्त्री-पुरुषों की शोभा बढ़ाते हैं। श्रावणी तीज पर विभिन्न प्रकार के लहरिये और मोठड़े पहिने-ओढ़े जाते हैं। जन्मोत्सव पर जच्चा को पीला ओढ़ाया जाता है। कई प्रकार की चून्दड़ियाँ और कोर-किनारी के रंग-बिरंगे वस्त्र उत्सव की शोभा बढ़ाते हैं। चून्दड़ी, लहरिया और मोठड़ों और कोर-किनारीदार वस्त्रों के प्रकार भी राजस्थान में कई प्रचलित हैं। कसीदा, कढ़ाई और कटाई भी विशेष आकर्षक होती है। घोड़ों, ऊंटों और हाथियों को भी उत्सवों में कई प्रकार के रंगीन वस्त्रों और गहनों से सजाया जाता है। भवनों और मण्डपों में काम आने वाले पर्दे, चंदोवे और बिछात आदि के वस्त्र अपनी रंगीन छटा में अनुपम लगते हैं।

उत्सवों में घर के चौकों, आंगनों और द्वारों पर विभिन्न प्रकार के मांडनों में पगल्या, फूल आदि कई प्रकार की आकृतियाँ अंकित की जाती हैं। राजस्थानी माण्डनों में लाल आंगन और सफेदा ही काम में आता है। घर की, मुख्यतः द्वार की सफेद दिवारों पर लाल हिरमिच की उत्सवों के अनुकूल आकृतियां बनाई जाती हैं। कभी-कभी चितारे से भी द्वार पर हाथी, घोड़ा, ऊंट, छड़ीदार आदि विभिन्न रंगों में चित्रित करवाये जाते हैं।

उत्सवों में राजस्थनी महिलाएं अपने हाथों और पैरों को मेंहदी की आकृतियों से सजाती हैं। मेंहदी का यह अंकन कलापूर्ण और आकर्षक होता है। कई राजस्थानी महिलाएं मांडणा और मेंहदी की कला में बहुत दक्ष होती हैं।

कई प्रकार की क्रीड़ाओं और खेल-तमाशों द्वारा भी उत्सवों में मनोरंजन किया जाता है। धार्मिक क्रियाओं और रिति-रिवाजों से फुर्सत पाकर लोग उत्सव के अनुकूल क्रीड़ाओं में ही व्यस्त रहते हैं। जैसे दशहरे पर आखेट और पशु-युद्ध आयोजन करने की प्रथा रही है। श्रावणी तीज पर झूला और गणगौर पर नौका-विहार की प्रधानता देखी जाती है। उत्सवों में लोग पट्टाबाजी, गेंद, चौपड़ आदि खेलने में भी करते हैं। कई उत्सवों को घुड़-दौड़ भी होती है।

राजस्थानी लोकोत्सवों की एक प्रमुख विशेषता यह है कि उत्सवों पर हमारा जन-मानस वीरता, शृंगार और भक्ति की त्रिवेणी में लहराने लगता है। राजस्थान एक वीर-भूमि रहा है। यहाँ के वीरों और वीरांगनाओं ने अपनी आन, मान-मर्यादा और मातृभूमि की रक्षा के लिये असीम त्याग किया है। उत्सवों में प्रचलित गीतों, नृत्यों और क्रीड़ाओं में वीरता की भावना अनायास ही झलक उठती है। उत्सवों के मूल में शृंगारिक भावना तो रहती है किन्तु नर-नारी ऐसे अवसर पर अपने असीम संयम का परिचय देते हैं और सारा वातावरण पूर्ण आनन्दमय होते हुए भी सयमित रहता है। धार्मिक उत्सव पूर्ण रूपेण भक्ति-भावों से युक्त होते हैं।

अब हमारा देश नव निर्माण की दिशा में द्रुतगति से बढ़ रहा है। लोकोत्सवों का प्रधान उद्देश्य जनता में स्फूर्ति का संचार करना है। नवीन जागरण में हमारे लोकोत्सव विशेष सहायक हो सकते हैं। ऐसी अवस्था में हमें अपने श्रेय के लिये लोकोत्सवों का आयोजन संपूर्ण उत्साह से करना ही चाहिए।

दूगड़ बिल्डिंग,
मि० इ० रोड, जयपुर
गणगौर पर्व, १९५७ ई०

—पुरुषोत्तमलाल मेनारिया

विगत—

राजस्थानी लोकोत्सव

अध्याय १

राजस्थान के त्यौहार

त्यौहार किसी भी समाज व देश के जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। सभी देशों में अपने अपने त्यौहार मिलते हैं। इनके साथ उस देश की संस्कृति रहती है। इनके साथ किसी भी जाति का अपना अटूट सम्बन्ध रहता है। भारतवर्ष में दीपावली, होली, गणेश चतुर्थी, गौरी पूजन, नवरात्रो, ईद आदि प्रमुख त्यौहार हमारे देखने में आते हैं। प्रान्तानुसार इनका महत्त्व घट कर या बढ़कर रहता है। बंगाल में दुर्गा पूजन, महाराष्ट्र में गणेश चतुर्थी, मैसूर में दशहरा, राजस्थान में होली; दक्षिण भारत में संक्रान्ति (पूँगल) आदि बड़ी धूमधाम से मनाये जाते हैं। वैसे तो लगभग सभी मुख्य-मुख्य त्यौहार सभी प्रान्तों में समान हैं किन्तु किसी प्रान्त में कोई कोई त्यौहार बड़े ही उत्साह से मनाया जाता है और उस पर बहुत ही अधिक ध्यान दिया जाता है। त्यौहार राष्ट्रीय एकता लाने में भी सहयोग देते हैं जैसे दशहरा, दीपावली, होली, आदि भारत के लगभग सभी भागों में मनाये जाते हैं। त्यौहारों से हमारे समाज में नव जीवन आ जाता है।

त्यौहारों के पीछे कई बातें रहती हैं। लगभग सभी त्यौहारों के साथ कुछ न कुछ कथा लगी हुई है। होली के त्यौहार के पीछे भौतिक-

विगत—

———

राजस्थानी लोकोत्सव

अध्याय १

राजस्थान के त्योहार

त्योहार किसी भी समाज व देश के जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। सभी देशों में अपने अपने त्योहार मिलते हैं। इनके साथ उस देश की संस्कृति रहती है। इनके साथ किसी भी जाति का अपना अटूट सम्बन्ध रहता है। भारतवर्ष में दीपावली, होली, गणेश चतुर्थी, गौरी पूजन, नवरात्री, ईद आदि प्रमुख त्योहार हमारे देखने में आते हैं। प्रान्तानुसार इनका महत्त्व घट कर या बढ़कर रहता है। बंगाल में दुर्गा पूजन, महाराष्ट्र में गणेश चतुर्थी, मैसूर में दशहरा, राजस्थान में होली; दक्षिण भारत में संक्रान्ति (पूँगल) आदि बड़ी धूमधाम से मनाये जाते हैं। वैसे तो लगभग सभी मुख्य-मुख्य त्योहार सभी प्रान्तों में समान हैं किन्तु किसी प्रान्त में कोई कोई त्योहार बड़े ही उत्साह से मनाया जाता है और उस पर बहुत ही अधिक ध्यान दिया जाता है। त्योहार राष्ट्रीय एकता लाने में भी सहयोग देते हैं जैसे दशहरा, दीपावली, होली, आदि भारत के लगभग सभी भागों में मनाये जाते हैं। त्योहारों से हमारे समाज में नव जीवन आ जाता है।

त्योहारों के पीछे कई बातें रहती हैं। लगभग सभी त्योहारों के साथ कुछ न कुछ कथा लगी हुई है। होली के त्योहार के पीछे भौतिक-

विगत—

———

राजस्थानी लोकोत्सव

अध्याय १

राजस्थान के त्यौहार

त्यौहार किसी भी समाज व देश के जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। सभी देशों में अपने अपने त्यौहार मिलते हैं। इनके साथ उस देश की संस्कृति रहती है। इनके साथ किसी भी जाति का अपना अटूट सम्बन्ध रहता है। भारतवर्ष में दीपावली, होली, गणेश चतुर्थी, गौरी पूजन, नवरात्री, ईद आदि प्रमुख त्यौहार हमारे देखने में आते हैं। प्रान्तानुसार इनका महत्त्व घट, कर या बढ़कर रहता है। बंगाल में दुर्गा पूजन, महाराष्ट्र में गणेश चतुर्थी, मैसूर में दशहरा, राजस्थान में होली; दक्षिण भारत में संक्रान्ति (पूंगल) आदि बड़ी धूमधाम से मनाये जाते हैं। वैसे तो लगभग सभी मुख्य-मुख्य त्यौहार सभी प्रान्तों में समान हैं किन्तु किसी प्रान्त में कोई कोई त्यौहार बड़े ही उत्साह से मनाया जाता है और उस पर बहुत ही अधिक ध्यान दिया जाता है। त्यौहार राष्ट्रीय एकता लाने में भी सहयोग देते हैं जैसे दशहरा, दीपावली, होली, आदि भारत के लगभग सभी भागों में मनाये जाते हैं। त्यौहारों से हमारे समाज में नव जीवन आ जाता है।

त्यौहारों के पीछे कई बातें रहती हैं। लगभग सभी त्यौहारों के साथ कुछ न कुछ कथा लगी हुई है। होली के त्यौहार के पीछे भौतिक-

वाद पर आध्यात्म की विजय है। दीपावली राम और भरत के मिलाप तथा राम का प्रजाजन से मिलन और प्रसन्नता व्यक्त करता है। दशहरा राम की रावण पर विजय बतलाता है, गणगौर स्त्रियों की पति के प्रति निष्ठा प्रकट करता है। इस प्रकार कुछ त्यौहार सामाजिक दृष्टि से महत्त्व रखते हैं जैसे रक्षाबन्धन और भैया दूज, कुछ प्रकृति का महत्व व्यक्त करते हैं जैसे मकर संक्रान्ति और अक्षय तृतीया; कुछ धार्मिक दृष्टि से महत्त्व रखते हैं जैसे शिवरात्रि, गणगौर आदि।

त्यौहारों का उद्देश्य हमारे जीवन में कुछ नवीनता लाना है। जो जाति जितने उत्साह से अपने त्यौहारों को मनाती है वह उतनी ही प्राणवान और सशक्त मानी जाती है। इस प्रकार त्यौहार हमारे जीवन में उत्साह और प्रसन्नता, सुख और मनोरंजन लाते हैं। लगभग सभी त्यौहारों में गाने, बजाने हर्षोल्लास मनोविनोद रहते हैं, अतएव वे उसमें संजीदगी देते हैं। इनके साथ किसी भी जाति की परम्परायें भी लगी हुई रहती हैं।

त्यौहारों पर स्वच्छ और नये वस्त्र पहने जाते हैं और आभूषण धारण किये जाते हैं। इस प्रकार ये समृद्धि का ध्यान करवाते हैं। आनन्द और उल्लास से ही त्यौहारों की उत्पत्ति हुई है। खरीफ की फसल पक कर तैयार हुई और काटी जाने लगी। नये अन्न को खाया गया और दीपावली मनाई गई। रबी की फसल तैयार हुई और होली का महोत्सव मनाया गया। उसकी ज्वालाओं में गेहूं और जौ की बालें सेकी गईं और खाई गई। ऋतु के सुहावने पन का अधिक आनंद उठाने के लिये होली जैसे त्यौहार की उत्पत्ति हुई। उन दिनों बसन्त की थी सम्पन्नता के कारण और चांदनी रात के वैभव से होली त्यौहार की आवश्यकता समझी गई और उसकी अवतारणा हुई। लोकगीतों और लोकनृत्यों ने उसे और भी आनंद वैभव दिया। बसंत पंचमी का महत्त्व इसी दृष्टि से है कि जो जाड़ा जन जन को सता रहा था, जिससे अङ्ग अङ्ग ठिठुर और जकड़ गये थे, जिन नसों में खून का प्रवाह मन्थर गति से होने लगा था वह अब तरल बनकर गति पकड़ रहा है और शरीर को स्फूर्ति प्रदान कर रहा है। सूर्य के उत्तरायण होने के साथ ही मकर संक्रान्ति जैसे त्यौहार का जन्म हुआ। समय पाकर धर्म का इसके साथ सम्बन्ध जोड़ दिया गया और दान पुण्य का महत्त्व भी इसी

अवसर पर बतला दिया गया। अक्षय तृतीया के त्यौहार के पीछे कृषि का ही महात्म्य है। कहीं कहीं इसी दिन से बीज बुवाई होती है और कृषि-कार्यों का सूत्रपात होता है।

इसी प्रकार त्यौहार स्त्री, पुरुष, बालिका और बालक सभी के हैं। बालकों का त्यौहार गणेश चौथ है; बालिकाओं के तीज, भैया दूज, चाना-चट; स्त्रियों के गणगौर, रक्षाबन्धन और पुरुषों के होली, दिवाली आदि। इसी प्रकार वर्ग के अनुसार भी त्यौहार बांटे गये हैं। ब्राह्मणों का ऋषि पंचमी, वैश्यों का दीपावली, क्षत्रियों का दशहरा और शूद्रों का होली।

राजस्थान में इन त्यौहारों का महत्त्व इसीलिये बढ़ा हुआ है कि इन्हीं अवसरों पर राजा महाराजा प्रजाजनों के सम्पर्क में आते थे। राज्य की ओर से इन्हें मनाने के लिये पूर्ण सहयोग दिया जाता था। किन्तु उनके खतम कर दिये जाने के बाद त्यौहार निष्प्राण हो गये हैं। त्यौहारों पर मेंहदी-मांडना जैसी कला का काम भी होता है और वैसे ही भूमि अलंकरणों का भी।

तीज

"तीज त्यौहारां बावड़ी ले डूबी गणगौर" अर्थात तीज वापिस त्यौहारों ने लेकर आई और गणगौर उनको लेकर डूब गई। राजस्थान में गर्मियों के दिनों में कोई त्यौहार नहीं मनाया जाता। दो तीन महीने तक मनोरंजन की दृष्टि से सामाजिक जीवन में नीरसता आ जाती है। तीज आई तो त्यौहार शुरू होगये।

तीज के त्यौहार के पहले से ही चौमासा के गीत प्रारम्भ होजाते हैं। ये चौमासा के गीत, मारवाड़, बीकानेर, जैसलमेर और शेखावाटी के शुष्क प्रदेशों में विशेष गाये जाते हैं। ये इलाके वर्षा का मूल्य ठीक आंक सकते हैं। कुछ प्रदेशों में तो वर्षा के पहले से ही गीत शुरू हो जाते हैं और कुछ इलाकों में वर्षा के शुरू होते ही गीत प्रारम्भ होते हैं। अपने अपने मोहल्लों में स्त्रियों के झुंड गीत गाना प्रारम्भ कर देते हैं गांव-गांव और कसबों कसबों में जब ये गीत गाये जाते हैं तब लोक जीवन में उल्लास और उन्माद आजाता है और सरसता उमड़ पड़ती है। कालिदास के यक्ष को जब आषाढ़ में बादल दिखलाई देगया था तो उसने मेघ के द्वारा संदेश भेजा। बादल देखते ही उसकी विरह-व्यथा

इस त्यौहार के दिन किसी सरोवर के पास एक मेला भरता है। इसमें झूला डाला जाता है। सभी लोग उस पर झूलते हैं। गणगौर की प्रतिमा भी कहीं कहीं निकाली जाती है। तीज को कहीं कहीं हरियाली तीज भी कहते हैं। तीज का त्यौहार प्राकृतिक त्यौहार है। यह किसी की स्मृति में नहीं मनाया जाता। राजस्थान में बहिन भाई का प्यार लोक गीतों में बहुत व्यक्त हुआ है अतएव उसका इसमें प्राधान्य देखा जाता है किन्तु मनोविज्ञान की आधार शिला पर यह खड़ा है। हृदय की दुर्बलता अपने प्यारे की याद, ऐसे सुहावने अवसर पर स्वाभाविक ही है। अतएव जो पति कमाने के लिये इस अवसर पर जा रहे हैं उनसे सम्बन्धित भी गीत हैं और जो पहले से परदेश गये हुए हैं उन्हें राजस्थानी स्त्रियाँ कुर्जा के हाथ संदेशा भेजती हैं—

'कुरजाँ ए म्हारो भंवर मिलाद्यो ए'

प्रसिद्ध गीत पीपळी भी इसी अवसर पर गाया जाता है—

'बाय चल्या छा भंवरजी पीपळीजी।
हाँजी ढोला होगई घेर घुमेर,
बैठण की रुत चाल्या चाकरीजी।
ओजी म्हारी सास सपूती रा पूत,
मतना सिधारो पुरब की चाकरीजी।'

सावण (बरसात), झूला, हरियाली से युक्त सुहावने वातावरण का चित्रण, खेती की बुवाई आदि एक सुरम्य वातावरण उपस्थित करते हैं। इसी वातावरण को मूर्त रूप प्रदान करने वाली तीज है जिसके प्रतीक के रूप में लोग मेलों में उसकी मूर्ति निकालते हैं।

तीज का त्यौहार खेतों की बुवाई से सम्बंधित है। हमारे देश में बड़ी सुहावनी, सुखद और सुरंगी ऋतु आई है। 'मेह बाबा आया है और सिट्टा फळी लाया है।' किसने मधुर मोठ और बाजरा बोना शुरू कर दिया है?

'कान्हो बावै बाजरो ये बदळी,
ईसर बावै मोठ मेवा मिसरी।
सुरंगी रुत आई म्हारै देस!
यो कुण बीजै बाजरो ये बदळी?
यो कुण बावै मोठ मेवा मिसरी?

जाग उठी। बरसात के लिये तरसने वाले प्रदेश तो वर्षा का कैसे उपकार नहीं मानें ?

किसी किसी इलाके में तीज के त्यौहार की समाप्ति पर बरसात के गीत समाप्त कर दिये जाते हैं और किसी किसी में समस्त चौमासे (आषाढ़, श्रावण, भाद्रव, आसोज) में गाये जाते हैं। तीज का त्यौहार मुख्यतः बालिकाओं और नव विवाहिताओं का त्यौहार है। इस त्यौहार के अवसर पर स्त्री समुदाय नये वस्त्र धारण करता है और घरों में पक्वान्न बनता है। एक दिन पूर्व बालिकाओं का सिंधारा (शृंगार) किया जाता है। 'आज सिंधारा तड़के तीज, छोरियां नैं लेगो गूगो पीर' उक्ति भी बालिकाएं कहती हैं। हाथों-पैरों पर मेंहदी माँडी जाती है। विवाहिता बालिकाओं के सुसराल में 'सिंधारा' वस्त्र आदि भेंट स्वरूप उनके माता पिता भेजते हैं। तीज के त्यौहार पर लड़की अपने पिता के घर आती है। लोकगीतों के अध्ययन से पता चलता है कि सुसराल में बालिका की सास उसको भारी काम देती है अतएव वह अपनी मा के पास उपालम्भ भेजती है। साथ ही अपने भाई के वियोग में तड़फती भी है—

तूं क्यूँ कनीराम बीरा नींदड़ल्या में सूत्यो राज।
तेरी तो मा की जाई सासरै में झूरै राज॥

× × ×

आधीसी रात पहर को तड़को, कानीराम बीरै घोड़लिया पिलाएया राज।

अन्य बालिकाएं झूलने के लिये निकल पड़ी हैं और कुछ झूल भी रही हैं किन्तु उसको उसकी सास ने पीसना दे रक्खा है—

'और सहेल्यॉ मा हींडणनैं ए जाय,
मन्नैं दीन्यो मा पीसणों जी।'

तीज के त्यौहार पर सर्वत्र हरियाली छाई रहती है। मोर बोलते हैं। कहीं कहीं उन्होंने छतरी तान रक्खी है। झूलों की इसमें बहार रहती है। विवाहिता बहन अपने भाई को धन्यवाद देती हुई कह रही है कि हे भाई! तुमने मेरे लिये हींडा (झूला) डलवाया है, मैं झूलने जारही हूँ—

गोपीराम बीरो हींडो घलायो।
बाई जैदां हींडण आई रे।

इन गीतों को सुनकर किसका हृदय नहीं उमड़ पड़ता?

इस त्यौहार के दिन किसी सरोवर के पास एक मेला भरता है। इसमें झूला डाला जाता है। सभी लोग उस पर झूलते हैं। गणगौर की प्रतिमा भी कहीं कहीं निकाली जाती है। तीज को कहीं कहीं हरियाली तीज भी कहते हैं। तीज का त्यौहार प्राकृतिक त्यौहार है। यह किसी की स्मृति में नहीं मनाया जाता। राजस्थान में बहिन भाई का प्यार लोक गीतों में बहुत व्यक्त हुआ है अतएव उसका इसमें प्राधान्य देखा जाता है किन्तु मनोविज्ञान की आधार शिला पर यह खड़ा है। हृदय की दुर्बलता अपने प्यारे की याद, ऐसे सुहावने अवसर पर स्वाभाविक ही है। अतएव जो पति कमाने के लिये इस अवसर पर जा रहे हैं उनसे सम्बन्धित भी गीत हैं और जो पहले से परदेश गये हुए हैं उन्हें राजस्थानी स्त्रियाँ कुर्जा के हाथ संदेशा भेजती हैं—

'कुरजाँ ए म्हारो भंवर मिलाद्यो ए'

प्रसिद्ध गीत पीपळी भी इसी अवसर पर गाया जाता है—

'बाय चल्या छा भंवरजी पीपळीजी।
हाँजी ढोला होगई घेर घुमेर,
बैठण की रुत चाल्या चाकरीजी।
ओजी म्हारी सास सपूती रा पूत,
मतना सिधारो पूरब की चाकरीजी।'

सावण (बरसात), झूला, हरियाली से युक्त सुहावने वातावरण का चित्रण, खेती की बुवाई आदि एक सुरम्य वातावरण उपस्थित करते हैं। इसी वातावरण को मूर्त रूप प्रदान करने वाली तीज है जिसके प्रतीक के रूप में लोग मेलों में उसकी मूर्ति निकालते हैं।

तीज का त्यौहार खेतों की बुवाई से सम्बन्धित है। हमारे देश में बड़ी सुहावनी, सुन्दर और सुरंगी ऋतु आई है। 'मेह बरसा करता है और सिंहु पक्षी लाया है।' जिसने मधुर मोड और बादल देना शुरू कर दिया है?

'बरसो बाई बादली रे बरसाँ,
ईसर आई मोड केश निसरी।
सुरंगी रुत आई म्हारे देस !
ये कुण बींजी बादली रे बरसाँ !
ये कुण आवे मोड केश निसरी !

मोठ, मेवा मिसरी के समान मधुर हैं; हे बादली इनको कौन बो रहा है ? लोक गीत शेष सृष्टि के साथ रागात्मक सम्बन्ध स्थापित करते हैं। भावोद्रेक की अवस्था में जड़ और चेतन का ध्यान मनुष्य को नहीं रहता।

जयपुर और बूंदी में तीज के त्यौहार पर राजाओं की सवारियां निकलती हैं और बड़ी धूमधाम से तीज मनाई जाती है।

जिला सिरोही

समदरिया हिलोर (सावणिया री तीज)

यहां पर कई दिनों तक तालाब पूजने की प्रथा है। पूजा के अंतिम दिन विवाहित बहनों के भाई अपनी बहिनों को भेंट और पोशाक देते हैं। यदि सगा भाई न हो तो कुटुम्ब कबीले का भाई यह कार्य सम्पन्न करता है। इसके पीछे एक दर्दपूर्ण कथा है, कि अंतिम पूजा के दिन पुराने जमाने में किसी बहिन का भाई उपहार देने नहीं आया। उसने उसकी बड़ी प्रतीक्षा की। अंत में वह इस मानसिक वेदना के कारण कि उसके भाई के हृदय में अपनी बहिन के प्रति कोई प्यार नहीं है जल में गिर पड़ी। उसी समय उसका भाई पहुँचा भी किन्तु वह तो तब तक जल मग्न हो गई थी। तभी से इस त्यौहार के लिये लोग बड़े सतर्क रहते हैं।

श्रावण शुक्ला तीज को छोटी तीज मनाई जाती है और बड़ी तीज भादवे के महीने में। छोटी तीज ही अधिक प्रसिद्ध है और इसी पर प्रायः सभी जगह मेले लगते हैं। इन मेलों में ऊंटों और घोड़ों की दौड़ होती है जिसका दृश्य दर्शनीय होता है।

होली

होली का त्यौहार भी आदि त्यौहार है। इसके पीछे ऋतु-परिवर्तन और रबी फसल की कटाई है। जाड़े की कठिन और कष्टदायक ऋतु के बाद बसंत का आगमन होता है और सर्वत्र सुहावना वातावरण हो जाता है। न अधिक सर्दी रहती है और न अधिक गर्मी।

इसके साथ भी समय पाकर पौराणिक कथा जुड़ गई। हिरण्य- एक तानाशाही राजा राज्य करता था, वह अपने को बड़ा था और समझता था कि मुझसे बढ़कर कौन है ?

उसके पुत्र प्रह्लाद ने कहा "आपसे बढ़कर भी कोई दूसरी चीज दुनिया में है और वह है परमात्मा।" अंत में नरसिंह अवतार होता है और हिरण्यकश्यप मारा जाता है। इस कथानक में भौतिकवाद पर आध्यात्म की विजय है। हिरण्यकश्यप की बहिन होली प्रह्लाद को अपने वरदान के बल से अग्नि में लेकर बैठी थी। प्रभु की कृपा से होली जल गई और प्रह्लाद बच गये। भारतवर्ष की जनता ईश्वर में विश्वास करती है और यह मानती है कि परमात्मा सर्वत्र व्याप्त है। उसी परिपाटी को दोहराया भी जाता है। एक छोटा सा पेड़ होली जलाते समय पहले से ही रक्खा जाता है फिर आग लगाने पर उसको निकाल लेते हैं। यह छोटा वृक्ष प्रह्लाद का प्रतीक होता है।

होली के त्योहार से कुछ दिन पूर्व गोबर के बड़कुल्ले बनाये जाते हैं। उनकी माला तैयार की जाती है। गोबर की ही होली की प्रतिमा बनाई जाती है। एक माला को थोड़ा जलाकर (होली की अग्नि में) निकाल भी लेते हैं और वह घर में टंगी रहती है।

होलिका दहन के दिन होली जलने से कुछ समय पूर्व उस सामग्री का पूजन होता है। उसमें होली खांडा भी रहता है। ढाल और तलवार भी लकड़ी के रहते हैं। ये उपकरण शौर्य और युद्ध की स्मृति करवाते हैं। गोबर आर्य संस्कृति की याद दिलाता है जिसमें गो और खेती की प्रधानता है।

होली त्योहार से कुछ दिन पूर्व से बालिकाएं और स्त्रियां मिल कर गीत गाती हैं। लोकगीत चूंकि लोक-जीवन के बहुत समीप हैं अतएव गेंद (दड़ी) खेलने की चर्चा भी उनमें मिलती है—

'यो कुण खेले छै फाग यो कुण खेलै लाल दड़ी!

साथ ही डप सम्बन्धी गीत भी गाये जाते हैं।

'रंगीलो चंग बाजैगो।
डप आंगळियां बाजै डप मूंदड़ियां बाजै,
डप पूंचे के बल, बाजै म्हो रंगीलो चग बाजैगो।'

होली फूलों की झोली भर कर आई है। कितने उल्लास और ऐश्वर्य का समय है—

'होली आई ये फूलों की झोली मिरमिरियो ले
यो कुण खेलै ए केसरियो वालो मिरमिरियो ले?'

होली गढ़ को अलग जलाई जाती है। गढ़ वह स्थान होता है जहां राजा रहता था। आम जनता की होली अलग जलती है। कहीं कहीं समान गोत्र वाले अपनी होली अलग जलाते हैं, यह प्रदर्शित करने के लिये कि हमारी बड़ी प्रतिष्ठा है। होली के अवसर पर पटाके, फूलझड़ियां भी छोड़ी जाती हैं और रंग भी पिचकारियों से छोड़ते हैं। होली के दूसरे दिन रंग डाले बिना अपने मित्रों को छोड़ा नहीं जाता। भरतपुर और अलवर में होली का त्यौहार विशेष उल्लास से मनाया जाता है, चूंकि ब्रज भूमि के ये निकट हैं। अलवर में राजा स्वयं हाथी पर चढ़ कर जनता के साथ बाजार में होली खेलता है।

होली पर मजाक करने की प्रथा भी देखी जाती है। जो भावनायें वर्ष भर में रुकी रह जाती हैं उनको भी बहाव के लिये इस त्यौहार पर अवसर मिल जाता है।

फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा को होली का त्यौहार मनाया जाता है। राजस्थान के कुछ भागों में दुलंडी के दिन अभिवादन करने और मंदिरों में जाने की भी प्रथा है। इस दिन हरिजन नृत्य-गायन द्वारा अपना और दूसरों का मनोरंजन करते हैं।

दीपावली और गोवर्द्धन पूजन

राजस्थान में दीपावली का त्यौहार भी बड़े उत्साह से मनाया जाता है। १०-१५ रोज पहले से ही घरों और दुकानों की मरम्मत और सफाई की जाती है। काम में आने वाले औजारों, कलम, दवात आदि की सफाई होती है। काली रोशनाई तैयार की जाती है। बही खाते नये डाले जाते हैं और पिछला हिसाब चुकाये जाने का तकाजा किया जाता है।

दीपावली से दो दिन पूर्व एक दीपक जलाया जाता है। इसे 'जम दिया' (यम दीप) कहते हैं। उसमें एक कौड़ी भी डालते हैं। इसके पास बैठे रहना पड़ता है। घर के बाहर धूल की ढेरी बनाकर यह जलाया जाता है और हवा से उसे बचाने की पूर्ण चेष्टा की जाती है। दूसरे दिन छोटी दिवाली मनाई जाती है। इसमें ११ दीपक जलाये जाते हैं। कार्तिक कृष्णा अमावस्या का अन्धकार दूर करने के लिये बड़ी दिवाली लगभग समस्त हिन्दुस्तान में मनाई जाती है। छोटी दिवाली को तेल की चीजें बनाई जाती हैं और बड़ी दिवाली को तेल

और घी दोनों की। राजस्थानी पैदावार करिया, गुँवार की फली आदि विशेष रूप से तल कर खाई जाती है और शकुन माना जाता है। खरीफ की फसल लगभग कट जाती है। राजस्थान के अधिकांश भागों में केवल यही एक फसल होती है। अतएव लोगों को उत्साह भी रहता है। बड़ी दिवाली को कहीं ४१, कहीं ५१ और कहीं १०१ दीपक जलाये जाते हैं। दीपावली पूजन रात्रि को लगभग ८-६ बजे होती है। पूजन के बाद भोजन होता है। घर का बड़ा-बूढ़ा श्रद्धा और लगन से पूजन करता है। नंगे सिर पूजन नहीं होता। सभी बारी बारी लक्ष्मीजी की प्रतिमा अथवा चित्र को नमस्कार करते हैं। लक्ष्मीजी की छपी हुई या चित्रित तस्वीरें बिकती हैं। रुपये मोहर आदि भी उनके सामने रखे जाते हैं।

एक दीपक रात भर लक्ष्मीजी के सामने जलता रहता है। घरों पर दीपक जलाकर रख दिये जाते हैं। पूजन के बाद बाजार में लोग रामरमी (नमस्कार) अपने मित्रों एवं सम्बंधियों से करते हैं।

गोवर्धन पूजन अथवा अन्नकूट

दीपावली के दूसरे दिन अर्थात् कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा को अन्नकूट अथवा गोवर्धन पूजन का दिन होता है। मंदिरों में अन्नकूट (भोज) तैयार होता है। कुछ घरों में वह मंदिरों से भेजा जाता है और बदले में उन्हें रुपया, इकन्नी, चवन्नी यथा शक्ति भेंट स्वरूप दे देते हैं। इसी दिन घर के आगे गोबर डाला जाता है। उसकी पूजा होती है। दूसरे शब्दों में यह गाय की महत्ता ही बतलाता है। गोवर्धन का मतलब ही है गोवंश की वृद्धि। केन्द्रीय सरकार पिछले पांच वर्ष से इसी दिन से गो समृद्धि सप्ताह मना रही है, जो गोपाष्टमी तक चलता है। इसी गोवर्धन के दिन राजस्थान भर में छोटे, बड़ों के चरणों में नये वस्त्र पहनकर पड़ते हैं। इस अवसर पर जाति पाँति कम बरती जाती है। यद्यपि अपनी जाति वाले अत्यन्त निकट वालों के ही घर जाते हैं फिर भी आजकल जाति पाँति का भेद कुछ कम होता जारहा है। प्रीति सम्मेलन भी इसी दिन कहीं कहीं मनाये जाते हैं। इस दिन विरोध, वैर भुला दिये जाते हैं और सभी जैरामजी की अथवा नमस्कार, नमस्ते करते हैं। जैसा प्रेम का वातावरण इस त्यौहार पर देखा जाता है वैसा और किसी भी त्यौहार पर नहीं। चरण स्पर्श इस त्यौहार पर ही अधिक

होता है। होली पर भी सर्वत्र नहीं होता। अतएव गौ और गोवर तथा समृद्धि तीनों का दाता यह त्यौहार है। स्त्रियां भी अपने सम्बधियों के घरों में मिलने जुलने के लिये जाती हैं।

दीपावली का त्यौहार प्रेम और उल्लास का त्यौहार है। गाने-बजाने होते हैं। रोशनी होती है। गोवर्धन पूजन के दिन कहीं-कहीं बछड़े का पूजन कर स्त्रियाँ उससे हल जुतवाने का शकुन करती हैं और गीत गाती हैं। बैलों के सींग रँगे जाते हैं और रंगों के छापे उनके बदन पर दिये जाते हैं। भरतपुर, अलवर, उदयपुर की ओर यह प्रथा विशेष है।

दीपावली की रात्रि को हीड़ देने जाने की प्रथा राजस्थान में कई स्थानों पर प्रचलित है। वे लोग गौ पूजन करते हैं। गायों के गले में घंटियां बांधते हैं और हीड़ का एक विशेष गीत गाते हैं।

मेवाड़ में दिवाली से १५ दिन पहले ही लड़के और लड़कियों की टोलियां प्राय: सबके घर गाती हुई निकल जाती हैं। स्त्रियों के द्वारा भी दिवाली पर गीत गाये जाते हैं। लड़कों के द्वारा 'लोवड़ी' या 'हरणी' गीत गाये जाते हैं और लड़कियों के द्वारा 'घड़ल्यो'।

हरणी

१. हरणी हरणी थू क्यूं दूबली रे चाल म्हारे देस
काटा गवाँ री घूघरी रे धोळो तली रो तेल

घड़ल्यो

१. घड़ल्यो म्हारो लाडलो सैर में भागो जायरे भाई।
२. गाडा नीचे चँवला वाया,
उगा छोटा मोटा जी।
३. बाई ए दीवाली रा दिया बळे।

शीतलाष्टमी

होली पूजन से आठवें दिन यह त्यौहार पड़ता है। शीतला का तात्पर्य्य शीतल करने वाली से है। यह माता, चेचक, बोदरी आदि देवी के रूप में पूजी जाती है। प्रत्येक कसबे अथवा गांव में इसके मंदिर बने रहते हैं। वहां स्त्रियां जाकर पूजा करती हैं। कहती हैं—
'सीतला माता माई, टंडा मोला देई।'

आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार भी माता, बोदरी गरमी के कारण ही होती है, अतएव इस गरमी को शान्त करने वाली देवी की स्थापना की गई है। पौराणिक काल में जब भिन्न भिन्न देवी, देवताओं की सर्जना की गई, सभंवतः उसी समय इस देवी की कल्पना की गई हो। शीतलाष्टमी के दिन ठंडा (बासी) भोजन किया जाता है। एक कथा इस प्रकार मिलती है कि शीतला माता और ओरी माता दो देवियां थीं। वे वेश बदलकर भीख मांगने को निकलीं। एक अनभिज्ञ औरत ने जो उनको पहचान नहीं सकी, उनके हाथों में कुछ गरम चीजें रखदी जिसके परिणाम स्वरूप उनकी हथेली में फोड़े निकल आये। इसी दिन वे नाराज हो गई और उन्होंने श्राप दिया कि जो इस दिन गरम भोजन करेगा उसके चेचक और बोदरी निकल आयेगी।

इसी दिन घुड़ले का त्यौहार मनाया जाता है। स्त्रियां इकट्ठी होकर कुम्हार के घर जाती हैं और छेदों से युक्त एक घड़े में दीवा रखकर अपने घर गीत गाती हुई वापिस आती हैं। यह घड़ा बाद में तालाब में बहा दिया जाता है। कहा जाता है कि मारवाड़ के पीपाड़ नामक स्थान की कुछ स्त्रियां एक बार तालाब पर गौरी पूजार्थ गई थीं। अजमेर का सूबेदार मल्लूखॉ उन्हें लेगया। जोधपुर नरेश राव सातलजी को जब यह ज्ञात हुआ तब उन्होंने उसका पीछा किया। बड़ा भयंकर युद्ध हुआ। इस युद्ध में मल्लूखां के सेनापति घुड़लेखां का सिर तीरों से छेद डाला गया और राजाजी अपने राज्य की स्त्रियों को बचाकर ले आये। कहा जाता है कि उस सिर को लेकर स्त्रियां गांव में घूमी थीं।

शीतला पूजन के लिये जाते समय स्त्रियां निम्न गीत गाती हैं—

१. ईसरदासजी ओ दरवाजो खोल,
   थां पर म्हैर करैगी माता सीतला।
२. ऐडल सेडल तीसरी ए माय,
   जातीड़ारो वड़ो परवार मेरी माय।
   और चिणागो मंड मोकलो ए माय,
   मोतीड़ामा आछा ल्यायी मेरी माय।

शीतला के कोप से डरी हुई स्त्रियाँ गीतों में उनके चूड़े के रखी है। यह भावना गीतों में व्यक्त हुई है। इसका तात्पर्य है 'आप मेरी करना। मेरे पुत्रों की रक्षा करना और मेरे परिवार की रक्षा करना।'

'माताए दुलीचंदजी री पाग मलामत राखीये।
बागोरा री माय, म्हारी सेडळ माय, म्हारी सीतळा ये माय,
बहु ए लिछमां थारे चुड़लै राखी बांधे मेरी माय।
माता ए गीगराजजी री टोपी झबझल राखो ये।

(४) माता रै देवळ चढतां हालूड़ो (मालूड़ो) फाट्यो ए माय।
तेड़ो तेड़ो बजाजी रा बेटा हालूड़ो लावे ए माय।
म्हारी आद भवानी ऊँठाला री राणी बालूड़ारी रखवाली।

गणगौर

शिव द्रविड़ जाति के देवता थे। बाद में आर्य जाति ने भी इनको अपनाया। पौराणिक युग में इनकी महिमा पर बहुतसा साहित्य लिखा गया। भगवान शिवके ऊपर शिव पुराण लिखा गया जिसमें इनकी लीलाओं एवं चमत्कारों का वर्णन है। आज भी शिव की पूजा हिन्दू जीवन में कम देखने में नहीं आती। शिवरात्रि का त्यौहार तो हिन्दू जाति का एक प्रमुख त्यौहार माना जाता है। शिव की आज भी अर्चना लिंग रूप में होती है। संभवत इसके पीछे सृष्टि-सर्जन की ही भावना है। इन्हीं शिव की स्त्री गौरी (पार्वती) है। गौरी ने अपने दो तीन जन्मों में शिव को ही अपना पति रक्खा। पहले वह शक्ति नाम से थी। गौरी की एक निष्टा, उसका पातिव्रत धर्म देख कर ही शिवने उसका पति होना स्वीकार किया था। उसने शिव को पतिरूप में पाने के लिये तपस्या की थी। उसको तपस्या से विचलित करने के लिये उसकी परीक्षा ली गई किन्तु वह उसमें सफल रही।

गणगौर का त्यौहार मध्यप्रदेश में भी मनाया जाता है। सनियों के प्रदेशवाली राजस्थानी स्त्रियाँ इस त्यौहार को बड़ी निष्टा और श्रद्धा से मनाती हैं। राजस्थान में कुमारिकाओं का ऐसा विश्वास है कि इस व्रत के करने पर उनको श्रेष्ट पति मिलेगा। सधवा स्त्रियों का यह विश्वास रहता है कि उनका पति चिरायु होगा। लोक गीतों में यहाँ तक वर्णन मिलता है कि यदि तू रूठी हुई इस त्यौहार को मनायेगी तो तुझे रूठा पति मिलेगा। इसलिये बड़ी उमग और उत्साह से यह त्यौहार उनके द्वारा मनाया जता है।

इस त्यौहार से लगे हुए गीतों की संख्या राजस्थानी त्यौहारों में सबसे अधिक है। लगभग ३५ की संख्या के गीत इसी त्यौहार से सम्बंधित मिलते हैं।

लोक गीतों में गौर और शिव के सुखी घरेलू जीवन की झाँकी भी मिलती है। वे एक दूसरे को लौकिक स्त्री पुरुष की तरह परस्पर में सहयोग देते हैं। लोकसाहित्य में देवताओं को भी जनसाधारण की तरह लोक व्यवहार करना पड़ता है तभी वे लोक जीवन में जल्दी प्रवेश भी कर जाते हैं। नीचे पगड़ी बांधने और झंवारों (नये उगे जौ) के कार्य में सहयोग व्यक्त है—

(१) ईसर जी तो पेचो बांधै,
गोराँ बाई पेच सँवारै ओ राज,
म्हे ईसर थारी साळी छाँ।

(२) गोरो ईसर दास वाया-एक,
बाई गोरल, सींच लिया।

स्त्रियों द्वारा आभूषण एवं वस्त्रों की मनुहार की जाती है। स्त्रियाँ इस त्यौहार पर शृंगार कर नये वस्त्र धारण करती हैं, उसी प्रकार पुरुष भी। सतियों के प्रदेश राजस्थान में इस त्यौहार को बड़ी मर्यादासे मनाया जाता है। सम्बन्धित गीत हैं—

(१) लाड़ी भुवाँ नैं चूनड़ली रो चाव,
लेय्योना विरमादतजीरा इसरदास, कानीराम, चूनड़ी जे।
चूनड़ ओढ़ै बड़े ये साजन की धीय,
के विरमादत थारी कुळ वहू जे।

(२) लेय्यो लेय्यो जी नणद बाइ रा बीर,
लेय्यो जी हजारी ढोला झुमकड़ो।

(३) म्हारा माथा नैं मड़मद ल्याओ, म्हारा हंजामारू
यौंही रेयोजी।

होलिकादहन के बाद से ही गणगौर का त्यौहार प्रारंभ हो जाता है। होली की रात के पिण्ड बाँधे जाते हैं। सात दिनों तक उनकी पूजा होती है। आठवें दिन शीतला पूजने के बाद टीलों से बालू मिट्टी तथा कुम्हार के यहाँ से चिकनी मिट्टी ला कर गौर की प्रतिमा बनाई जाती है। ईसरदास, कानीराम, रोवाँ, गौर और मालण की भी प्रतिमाएँ

निर्मित की जाती हैं। जौ बो दिये जाते हैं। इन्हें जँवारा कहते हैं। गौर की पूजा १८ दिन तक की जाती है। गौर का त्यौहार चैत्र बदी १ से शुरु हो कर चैत्र शुक्ला तृतीया को समाप्त होता है। चैत्रशुक्ला १ से ३ तक मेला समस्त राजस्थान में लगता है।

गणगौर का त्यौहार वसंत की मादकता के बीच मनाया जाता है। कुमारिकाएँ फूल तोड़ने के लिये प्रातः काल निकल जाती हैं और गीत गाती हैं। गुलाब का फूल भली प्रकार प्रस्फुटित हो गया है और उस से सौरभ फूट निकली है—

'म्हारा बैया में बाजूबंद ल्यावो रंगरसिया,
गैरोजी फूल गुलाब को।
गैरो गैरोजी बाई जी थारो वीरो रंगरसिया,
म्हारी आँखड़ली फरकै घर आयो रंगरसिया।

गौर-पूजन के लिये विधवाओं को अधिकार नहीं। गौर के त्यौहार पर घुड़ला और चूनड़ी अत्यन्त आवश्यक है। इस त्यौहार पर विवाहित बालिकाओं को उनके माता पिता सिंधारा (भेंट पूजा) भेजते हैं। सधवा स्त्रियां अपने पति के घर रहने की आशा करती हैं—

'यांही रहो उगन्ता सूरज यांही रहो जी,
थाने राखे से होसी गणगौर म्हारा हजारा
यांही रहोजी।

चैत्रशुक्ला १ को गौरी की प्रतिमाएँ भी निकाली जाती हैं। इनका वर्णन हम मेलों के प्रसंग में करेंगे।

नवविवाहिता गौर का बिनौरा निकालती हैं। वे अपनी सखियों को भोजन के लिये निमंत्रित करती हैं—

'आज म्हारो गौर बनोरो नौतरयो।'
प्रेम और उल्लास जीवन के कितने निकट हैं!
म्हारै बाबाजी के मांडी गणगौर रंगरसिया,
पड़ी देख भँवरों ने ठालन्दो।

गणगौर के अवसर पर स्त्रियाँ घूमर नृत्य करती हैं। वस्तुतः, बूँदी में ये घूमरें बहुत ही सम्पूर्ण होती हैं।

सिरोही में गौरी की प्रतिमाएँ शहर की गलियों में से निकाली जाती हैं। स्त्रियाँ गीत गाती हैं और गरबानृत्य करती हैं।

पौराणिक आधार पर यहाँ ऐसा विश्वास है कि पार्वती (शिव की स्त्री) के अपने पिता के घर वापिस लौटने के उपलक्ष में उसका स्वागत और मनोरंजन अपनी सखियों द्वारा हुआ था तब से गणगौर का त्यौहार मनाया जाता है। गणगौर की सवारी जयपुर और बीकानेर की भी धूमधाम से निकलती है। इन में राजकर्मचारी भी शामिल होते हैं। नीचे कुछ गणगौर के गीत दिये जा रहे हैं। ये गीत बीकानेर-जैसलमेर पट्टी के हैं। इस मेले में ऊँटों और घोड़ों की दौड़ भी होती है कहावत है—गणगौर्याँ नैं ही घोड़ा नहीं दोड़े तो दोड़ेगा कद?

(१) खेलण दो गिणगोर, गाढ़ारे मारू पूजण दो गिणगोर,
होजी म्हाने गिणगोर्या रो चाव गढारे मारू,
खेलण दो गिणगोर।

(२) होजी म्हाने गजमंदरो ले हालो,
हो राणाराव।
गहरो फूल गुलाब को।
ऊँचा हो राणाजी थांरो बैठणो,
होजी थारे बिच में चम्पला री डाल हो।
राणा राव, गहरो फूल गुलाब रो

(३) गढ कोटा सूँ हे गवरल उतरी,
होजी वेंरे हाथ कमल करो फूल।
हे गवरल, रूड़ो हे निजारो तीखो,
हे नेणां रो।

अक्षयतृतीया

राजस्थान के जीवन में खेती का महत्त्व है ही। उत्तरी राजस्थान के भागों में तो एक फसल होती है और वह भी बीकानेर, जैसलमेर सरीखे इलाकों में बहुत ही कम। अतएव यहां खेती लोगों के जीवन का प्राण है। अक्षयतृतीया के दिन शाम को लोग हवाका रुख देखकर शकुन लेते हैं।

बाजरा, गेहूँ, चना, तिल, जौ आदि सात अन्नों की पूजा कर शीघ्र ही वर्षा होने की कामना की जाती है। कहीं-कहीं घरों के द्वार पर अनाज की बालों आदि के चित्र बनाये जाते हैं। स्त्रियां मंगलाचार के गीत गाती हैं और मनोविनोद की दृष्टि से स्वांग भी छोटे बच्चों के रचाये जाते हैं। लड़कियाँ दूल्हा-दुलहिन का स्वांग भरती हैं। यह त्यौहार वैसाख मास की शुक्ला तीज को मनाया जाता है।

जिला नागोर में इस दिन लोग अपने मित्रों और सम्बन्धियों को निमंत्रित करते हैं और भोज होता है। अपने अतिथियों की अफीम, गुड़ और अन्य भेंटों से मनुहार करते हैं।

सिरोही में इस दिन शकुन लेते हैं। लोगों का ऐसा विश्वास है कि इस दिन शकुन अच्छे हो जाते है तो सारा वर्ष आनंद से बीतता है और इस दिन अपशकुन होने पर कष्ट ही पल्ले पड़ते हैं। यहाँ एक रीति यह है कि लोग सुबह ही जंगलों में शिकार के लिये जाते हैं और जब तक शिकार नहीं हो जाती तब तक लौटते नहीं।

इस दिन कहीं कहीं पतंग उड़ाने का उल्लास भी प्राप्त किया जाता है और कुछ इलाकों में मकर संक्रान्ति पर पतंग उड़ाते हैं।

गणेश चतुर्थी

गणेश चतुर्थी का महत्त्व इस दृष्टि से सबसे अधिक है कि यह बालकों अथवा बच्चों का विशेष त्यौहार है।

इसमें गणेश पूजन होता है जिनकी बालरूप में पूजा होती है। गणेशजी विघ्नविनाशक और विद्यावारिधि हैं। अतएव पाठशालाओं में जानेवाले बच्चे इन्हें विशेष रूप से पूजते हैं।

गणेशजी का यह त्यौहार पाठशालाओं के द्वारा मुख्यतः मनाया जाता है। गणेश चतुर्थी से दो दिन पूर्व बच्चों का सिंधारा किया जाता है। वे नये वस्त्र धारण करते हैं और उनके लिये घर घर पक्का भोजन भी बनाया जाता है। इस दिन बच्चों का विशेष सम्मान किया जाता है।

लगभग एक मास पूर्व से ही पाठशालाओं में चहल-पहल हो जाती है। बच्चे चेहरे बनाते हैं और प्रत्येक सहपाठी के घर जाते हैं। ब्राह्मण घरों में प्रायः गुरुजी नारियल ही ग्रहण करते हैं। शेष घरों में धानतौर

से एक रुपया, नारियल लिया जाता है। शिष्य और गुरू एक दूसरे के तिलक करते हैं। साथ में बच्चे मनोविनोद के गीत भी गाते हैं। सरस्वती सम्बन्धी गीत भी गाये जाते हैं और गणेशजी सम्बन्धी भी। ये चेहरे लयबद्ध उछलते-कूदते चलते हैं। इनमें बड़ा उल्लास रहता है। साथ में गणेशजी, सरस्वती की मूर्ति भी रहती है।

पाठशाला के समस्त विद्यार्थी गुरूजी के साथ-साथ गायन गाते हुए चलते हैं। कुछ बालकों के हाथों में डंके होते हैं जिन्हें वे परस्पर भिड़ाते हैं। उनको घर से एक बटुवा दिया जाता है जिसमें मखाणा तथा सूखा मेवा रहता है। अनारदाने की गोली तथा पोस्त मूंगफली आदि की चक्की भी बनाई जाती है।

शेखावाटी चूरू की ओर आज भी यह त्यौहार इस रूप में देखा जा सकता है। गीत इस प्रकार हैं—

(१) सकती बाण लग्यो लिछमण के,
दुष्ट ने मारया तन के
लग्या बाण भाग्या घबरा कर
पड़ग्या धरणी पर मूर्छा खाकर।

(२) सुरसत माता तुझे मनाता,
दे विद्या तेरा गुण गाता।

(३) गौरी पुत्र गणेश मनाऊँ,
साल गिरह गणपत का गाऊँ।
भादू सुदी चोथ बुधवार,
जनम लियो गणपत दातार।

यह त्यौहार भादवा सुदी चौथ को मनाया जाता है। जैनियों के लिये भी यह पवित्र दिन है। कुछ जैन सम्प्रदाय के लोग इसे पंचमी को भी मनाते हैं।

रामनवमी

रामनवमी श्रीरामचंद्रजी का जन्मदिवस है। श्री रामचंद्रजी भगवान के अवतार माने जाते हैं। हिन्दुओं में इनकी बड़ी मानता है। इनका जीवन बड़ा मर्यादापूर्ण और कर्तव्य परायणता से युक्त था। मंदिरों में

इनका दिवस विशेष रूपसे मनाया जाता है। इस दिन मंदिरों मे भजन होते हैं और रामायण की कथा बाँची जाती है। लोग पूरी कथा सुनकर घर आते हैं। कहीं कहीं रामधुन भी लगाई जाती है। इस दिन व्यापारी वर्ग कहीं-कहीं अपने बही खातों को भी बदलते हैं। इस प्रकार व्यापारियों के लिये भी यह विशेष दिन है।

तुलसीपूजन

कन्यायें एक महीने तक इसकी पूजा करती हैं। तुलसीपूजन मंदिर में ही होता है। बालिकाएँ १५ दिन घृत का दीपक जलाकर अपने घर से ले जाती हैं और १५ दिन तेल का। यह कार्तिक मासमें सम्पन्न होता है। तुलसी श्रीकृष्ण भगवान की पत्नी मानी जाती है। यह कार्य शाम के समय किया जाता है। बालिकाओं के झुंड तुलसी के गीत गाते हैं—

(१) मैं तनैं पूछूँ तुलसाँ राणी,
कुण तेरो मँदिर चिणायो ए ?
कुण तेरै मंदरिये मैं नींव दिराई ए ?
राधा है वा हर की प्यारी,
वा मेरो मँदर चिणायो ए।
साँवरिये गिरधारी ठाकुर नींव दिराई ए।
हळवाँ हळवाँ पाँव धरो,
तुळसाँ कै मंदर आया ए।
हरजी म्हारै मंदर आया,
माणक मोती ल्याया ए।

(२) म्हे थानैं पूछाँ म्हारा सिरि श्रो ठाकुरजी,
थे पेचो कोठ बाँध्यो श्रो मथराजीरा वासी।
श्राज गया था राधा मोस्या रै बाडै,
मोस्यारो कँवर भायलो ए म्हारी
राधा ए प्यारी।

दशहरा

दशहरा को विजय दशमी भी कहते हैं। कहा जाता है कि इस दिन भगवान राम ने रावण पर विजय पाई थी। इसीलिये इसे विजयदशमी कहा जाता है। वस्तुतः यह शक्ति का त्यौहार है। राजपूताने में इस

से एक रुपया, नारियल लिया जाता है। शिष्य और गुरु ए
तिलक करते हैं। साथ में अपने मनोविनोद के गीत भी गे
सरस्वती सम्बन्धी गीत भी गाये जाते हैं और गणेशजी मन्द
से पीछे क्रमबद्ध उछलते-कूदते चलते हैं। इनमें बड़ा उत्साह
साथ में गणेशजी, सरस्वती की मूर्ति भी रहती है।

पाठशाला के समस्त विद्यार्थी गुरुजी के साथ-साथ चलते
चलते हैं। कुछ बालकों के हाथों में डंके होते हैं जिन्हें
बजाते हैं। उनको घर से एक सदुवा दिया जाता है जिसमें
सूखा मेवा रहता है। अनारदाने की गोली तथा पोस्त मूंगफली
चरकी भी बनाई जाती है।

शेखावाटी भूरू की ओर आज भी यह त्यौहार इस
जा सकता है। गीत इस प्रकार हैं—

(१) सकती बाण लग्यो लिछमण के,
दुष्ट ने मारया तन के
लग्या बाण भाग्या घबरा कर
पड़ग्या धरणी पर मूर्छा खाकर।

(२) सुरसत माता तुझे मनाता,
दे विद्या तेरा गुण गाता।

(३) गौरी पुत्र गणेश मनाऊँ,
साल गिरह गणपत का गाऊँ।
भादू सुदी चोथ बुधवार,
जनम लियो गणपत दातार।

यह त्यौहार भादवा सुदी चौथ को मनाया ... जैनों
लिये भी यह पवित्र दिन है। कुछ जैन ... इसे
को भी मनाते हैं।

राम

रामनवमी
के अवतार माने
जीवन बड़ा

अध्याय २

राजस्थान के उत्सव

उत्सव का मतलब उछाह से है। श्री मन्मथराय के शब्दों में
य दस बीस मनुष्यों से सम्बन्धित होता है और कामना की
ार्थता द्वारा सामूहिक आनद का उपभोग उसका ध्येय है।' इस
र कुछ उत्सव त्यौहारों से सम्बन्धित रहते हैं और कुछ स्वतंत्र होते
दीपावली महोत्सव, होलिकोत्सव, गणेश चतुर्थी महोत्सव ये
ारों से सम्बन्धित हैं और विवाहोत्सव, पुत्र जन्मोत्सव आदि स्वतंत्र
उत्सवों का उद्देश्य भी आनद को बढ़ाना है। कुछ व्यक्ति अथवा
यों एक उद्देश्य को लेकर एक चित्त हुए और उन्होंने उत्सव मनाया।
। बंटाने से बढ़ता है, दूना चौ गुना होता है। यदि विवाह के उत्सव
केवल परिवार के ही व्यक्ति मनायें तो इतना अच्छा नहीं लगता
ना परिवार से बाहर के व्यक्ति मित्र, साथी, संगियों के उसमें
मेल होकर मनाने से। त्यौहार तो एक परिवार के दो चार आदमी
मनायेंगे किन्तु उत्सव कई लोगों के समुदाय से होगा। किसी किसी
व में जुलूस भी निकलता है। जैसे होली का जुलूस निकलता है;
ष्टमी पर भी गाय के साथ में जुलूस निकलता है तथा दशहरा,
भूलनी, एकादशी के भी जुलूस निकलते हैं। इस प्रकार बसंतोत्सव,
दोत्सव, श्रावणी में हिंडोलों के उत्सव आदि कुछ उत्सव हैं। इनका
श्य भी हमारी प्रसन्नता को बढ़ाना है। उत्सवों में भाषण, गायन,
भिनय, कविता पाठ आदि के कार्यक्रम भी रहते हैं। चदन, तिलक,
ाल, अबीर, कुंकुम, इत्र, फुलेल, रोली, केसर से आगन्तुक व्यक्तियों
स्वागत किया जाता है। एक आयोजित, सुव्यवस्थित कार्यक्रम इनमें
ा है। इनके द्वारा गायन, भाषण, नृत्य आदि की कला को भी
साहन का अवसर मिलता है, क्योंकि कभी-कभी इन अवसरों पर
की प्रतियोगिता तक होती है।

त्यौहार को बड़े उत्साह से मनाते हैं। यहाँ राजाओं का राज्य रहा है अतएव उनकी ओर से यह बड़े धूमधाम से मनाया जाता है। कहीं सूअर की शिकार भी होती थी। दशमी के दिन दरबार लगता है और शस्त्रों की पूजा होती है। इस दिन प्रजा के प्रमुख लोग राजा को भेंट भी दिया करते थे। पुराने जमाने में कहीं-कहीं सभी जातियों की लाग लगती थी महलों में इस दिन मनोरंजन और गाने बजाने का कार्यक्रम भी रहता है हिन्दू घरों में पक्वान बनता है। लोग इस उत्सव को देखने के लि गढ़ों में जाया करते थे। यह खुले में लगता था। भरतपुर की ओर दशह का त्यौहार बड़ी शानशौकत से मनाया जाता है। इस अवसर पर य नुमायश लगती है, सामान बिक्री होता है। संगीत और नाटक मंडलियाँ आती हैं और सरकस के दल भी आकर अपना प्रदर्शन दे हैं। इस अवसर पर सारे राजस्थान में शमीवृक्ष (खेजड़ी) की पूजा जाती है और लीलटाँस पक्षी का दर्शन शुभ माना जाता है। अलवर १५-२० हाथी और कई घोड़ों के साथ सवारी निकलती थी। आश्वि शुक्ला दशमी को यह त्यौहार मनाया जाता है। हिन्दुओं के अ त्यौहारों में रक्षा बंधन, ऋषि पंचमी, नवरात्रि, भैया दूज, शिवरा आदि हैं किन्तु लोकगीत अथवा लोकनृत्यों की दृष्टि से वे विशे महत्त्वपूर्ण न होने से हम उनका नामोल्लेख मात्र ही कर देते हैं।

अध्याय २

राजस्थान के उत्सव

उत्सव का मतलब उत्साह से है। श्री मन्मथराय के शब्दों में उत्सव कम से कम बीस मनुष्यों से सम्बन्धित होता है और कामना की परिपूर्णता द्वारा सामूहिक आनंद का उपभोग उसका ध्येय है।' इस प्रकार कुछ उत्सव त्यौहारों से सम्बन्धित रहते हैं और कुछ स्वतंत्र होते हैं। दीपावली महोत्सव, होलिकोत्सव, गणेश चतुर्थी महोत्सव ये त्यौहारों से सम्बन्धित हैं और विवाहोत्सव, पुत्र जन्मोत्सव आदि स्वतंत्र हैं। उत्सवों का उद्देश्य भी आनंद को बढ़ाना है। कुछ व्यक्ति अथवा स्त्रियां एक उद्देश्य को लेकर एकत्रित हुए और उन्होंने उत्सव मनाया। सुख बंटाने से बढ़ता है, दूना चौगुना होता है। यदि विवाह के उत्सव को केवल परिवार के ही व्यक्ति मनायें तो इतना अच्छा नहीं लगता जितना परिवार से बाहर के व्यक्ति मित्र, साथी, संगियों के उसमें शामिल होकर मनाने से। त्यौहार तो एक परिवार के दो चार आदमी भी मनायेंगे किन्तु उत्सव कई लोगों के समुदाय में होगा। किसी किसी उत्सव में जुलूस भी निकलता है। जैसे होली का जुलूस निकलता है; गोपाष्टमी पर भी गाय के साथ में जुलूस निकलता है तथा दशहरा, जल झूलनी, एकादशी के भी जुलूस निकलते हैं। इस प्रकार बसन्तोत्सव, शरदोत्सव, श्रावणी में हिंडोलों के उत्सव आदि कुछ उत्सव हैं। इनका उद्देश्य भी हमारी प्रसन्नता को बढ़ाना है। उत्सवों में भाषण, गायन, अभिनय, कविता पाठ आदि के कार्यक्रम भी रहते हैं। चंदन, तिलक, शृंगार, अबीर, कुंकुम, इत्र, फुलेल, रोली, केसर से आगन्तुक व्यक्तियों का स्वागत किया जाता है। एक आयोजित, सुव्यवस्थित कार्यक्रम इनमें रहता है। इनके द्वारा गायन, भाषण, नृत्य आदि की कला को भी प्रोत्साहन का अवसर मिलता है, क्योंकि कभी-कभी इन अवसरों पर इनकी प्रतियोगिता तक होती है।

ऋतु के सुहावनेपन के कारण त्यौहारों की तरह ही उत्सवों का चलन हुआ है जैसे शरद और वसंत ऋतु के सुहावनेपन के ही कारण कई उत्सवों की उत्पत्ति हुई है।

पुराने जमाने में ऋतु-परिवर्तन होने पर उत्सव मनाये जाते थे। वसंत का उत्सव इस बात के लिये प्रमुख रहा है। पशु, वृक्ष, कृषि आदि भी उत्सवों के कारण रहे हैं, क्योंकि आदि मानव इनके बड़े ऋणी थे और इनको बड़ा सम्मान देते थे। आज भी तुलसी पूजन, गोपाष्टमी आदि उत्सव इसके प्रमाण हैं। जातीय वीर अथवा धार्मिक नेता के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के लिये भी उत्सव मनाये जाते थे, जैसे जन्माष्टमी, तुलसी जयन्ती, राम नवमी के उत्सव।

इन उत्सवों की उत्पत्ति के मूल में कृषि और ऋतु-परिवर्तन विशेष रहे हैं क्योंकि ये प्राकृतिक थे और आदि भी। मकर संक्रान्ति का उत्सव दक्षिण भारत में बहुत उत्साह से मनाया जाता है। किन्तु बाद में इनको धर्म से जोड़ दिया गया।

आज दीपावली और होली धर्म से संयुक्त हैं। दीपावली के साथ लक्ष्मी पूजन है और होली के साथ प्रहलाद, होलिका का पूजन किन्तु आदिम काल में कृषि से सम्बन्धित ही ये महोत्सव थे।

प्राचीन भारत में 'कौमुदी महोत्सव,' 'समय', 'सप्टका', 'मदन महोत्सव' आदि कई महोत्सव प्रचलित थे किन्तु बाद में धीरे धीरे वे लुप्त हो गये। प्राचीन उत्सवों मे नागपंचमी, होली और दीपावली भी हैं, जो अब तक चले आ रहे हैं। बाद में धार्मिकता के जोर पकड़ने पर धार्मिक उत्सव भी चलते रहे। इनमें नवरात्री, रथ यात्रा, विजय दशमी आदि के उत्सव थे जो आज भी विद्यमान हैं।

उत्सवों पर भूमि एवं भित्ति अलंकरण भी होता है। कई प्रकार की चित्रकला के नमूने अंकित किये जाते हैं। ये माँडणें, गेरू या हिरमिच, चूने अथवा गोवर से किये जाते हैं तथा अन्य कुछ पदार्थों से भी। विवाहोत्सव पर ऐसे उपक्रम किये जाते हैं, साथ ही रक्षाबंधन के दिन दरवाजों पर स्वस्तिक आदि के नमूने भी चित्रित किये जाते हैं।

शरदोत्सव

यह शरदपूर्णिमा के दिन मनाया जाता है। इस दिन मंदिरों की सजावट की जाती है। उनकी सफाई, धुलाई करते हैं और झाड़, गिलास

तस्वीरें आदि भी लगाई जाती हैं। टहनियों से हरे दरवाजे बनाये जाते हैं। तालावों से कमोद ला कर बिछाई जाती है और उस पर खिलौने रक्खे जाते हैं। कहीं कहीं फौवारों का भी प्रबन्ध रहता है। इस दिन स्त्री-पुरुष मंदिरों की शोभा और बहार देखने जाते हैं।

इस दिन मौसम बड़ी सुहावनी होती है। इस दिन चांद की चाँदनी अपने पूर्ण वैभव पर होती है। न अधिक सर्दी पड़ती है और न अधिक गर्मी। रेगिस्तानी भागों में मतीरे काट-काट कर रख दिये जाते हैं। वे लाल लाल मतीरे बड़े सुन्दर लगते हैं मानो कि धरती ने अनुराग पूर्वक अपना हृदय खोल कर रख दिया हो। इस दिन मंदिरों में भोग पदार्थ भी बनता है। विशेषत: इस दिन खीर बनती है। मतीरों के ठप्परों में खीर रख कर कुछ लोग मंदिरों की छतों पर रख देते हैं और प्रात: काल खाते हैं। उनका ऐसा विश्वास होता है कि चाँदनी के गुण इसमें आ जाते हैं। इसी दिन वैद्य लोग श्वास के रोगियों को दवा भी देते हैं। मंदिरों में भजन, गायन भी होते हैं और वातावरण उल्लास-मय रहता है।

नर-नारी मुख्य-मुख्य मंदिरों की छटा और बहार देखने तो अवश्य जाते हैं और कुछ लोग एक गांव अथवा कसबे के सभी मंदिरों में जाते हैं। यह उत्सव एक ही दिन रहता है और आश्विन शुक्ला पूर्णिमा को मनाया जाता है।

वसंतोत्सव

वसंत पंचमी के दिन यह उत्सव मनाया जाता है। इस दिन कुछ लोग पीत वस्त्र धारण करते हैं। बगीचों अथवा कूओं की ओर गांव से बाहर लोग जाते हैं और वहां गाने बजाने का कार्यक्रम रखते हैं। इसी दिन चंग अथवा डप भी बजना प्रारम्भ हो जाता है। कहीं कहीं इस दिन कविता पाठ का भी आयोजन होता है। होली त्योहार का प्रारम्भ इसी दिन से समझा जाना चाहिए। यह उत्सव माघ शुक्ला पंचमी को सम्पन्न होता है। स्कूल, पाठशालाओं में इस दिन समस्या पूर्ति, अनुवाचन तथा कविता पाठ का भी आयोजन रखते हैं।

होलीकोत्सव

होलिका दहन के दिन गांव के समस्त पुरुष एक साथ होली जलाते हैं। होली के चारों ओर परिक्रमा देते हैं और होलिका माता और

प्रहलाद भगत की जय जयकार बोलते हैं। बालक गण पटाके छोड़ते हैं। गेहूँ अथवा जौ की बालें भी होलिका की ज्वालाओं में सेकी जाती हैं।

दूसरे दिन कहीं-कहीं सिर्फ गुलाल ही डालने की प्रथा है तो कहीं कहीं रंग डालते हैं। मेवाड़ में रंग सात दिन तक डाला जाता है। होली का जुलूस निकाला जाता है जिसमें लोग डप पर लोक गीत गाते और नृत्य करते जाते हैं। यह क्रम दोपहर के बारह बजे तक रहता है। दोपहर बाद स्नान होता है। इस दिन कुछ भागों में स्त्रियां भी रंग डालकर गैर खेलती हैं।

कुछ स्थानों में लोग दोपहर बाद मंदिरों में जाते हैं और चरणामृत लेकर अपने अपने कामों में लग जाते हैं। होलिका दहन के दिन रात रात भर डांडिया नृत्य होता है। रेगिस्तानी भागों में यह उत्सव बड़े ही उल्लास से मनाया जाता है। अलवर का होली उत्सव विशेष प्रसिद्ध था इसमें राजा प्रजा के साथ होली खेलते थे। फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा को होली का दहन और चैत बदी १ को दुलंडी रहती है। होलिका दहन का मतलब बुराई को जला देना भी है।

दीपावली उत्सव

दीपावली त्यौहार रात्रिको मनाने के बाद लोग बाजारों में निकल जाते हैं और सबसे रामरामी होती है। वे शहर में की गई रोशनी को देखकर आनंदित होते हैं। दूसरे दिन सभी लोगों से प्रेम और आदर पूर्वक मिलना होता है। छोटे अपने से उम्र में बड़ों का चरण स्पर्श कर उनसे आशीर्वाद लेते हैं। सामाजिक दृष्टि से यह त्यौहार बहुत महत्त्वपूर्ण है। इस दिन लोग तीन चार बजे तक मंदिरों में जाते हैं और गुलाल आदि परस्पर में डालते हैं। इस उत्सव को पुनर्जीवित करने के लिये आजकल कुछ संस्थाओं ने प्रीति सम्मेलन या स्नेह सम्मेलन दिवस मनाने प्रारम्भ किये हैं। इस दिन कविता पाठ, गान और भाषण आदि का कार्यक्रम रहता है। लक्ष्मी-पूजन के दिन भी गाने बजाने का कार्यक्रम रहता है। किन्तु आजकल रेडियो और ग्रामोफोन का अधिक उपयोग होने लगा है। पहले लोग स्वयं गाने बजाते थे। स्वयं गाने बजाने में जो आनंद और लाभ है यह यंत्रों के द्वारा सुने जाने में नहीं। कार्तिक की अमावस्या को दीपावली पूजन और कार्तिक सुदी १ को प्रीति सम्मेलन मनाया जाता है।

विवाहोत्सव

सोलह संस्कारों में विवाह एक प्रमुख संस्कार है, जिसमें व्यक्ति गृहस्थधर्म में प्रवेश करता है। राजस्थान में इसके लिये बड़ा चाव व्यक्त किया जाता है। लगभग एक मास पूर्व से ही गीत आरम्भ हो जाते हैं। दूल्हे (बींद) को भोजन पर बुलाया जाता है। कई नेगचार करते जाते हैं। बनौरी निकलती है, यह सारे शहर में फिराई जाती है। दूल्हा घोड़े पर सवार होता है और बाजे बजाते हैं। प्रत्येक नेगचार के साथ गीत रहते हैं। निकासी निकलती है। दुकाव भी बड़े धूमधाम से राजस्थानमें निकलता है। वधू के घर भी वर का गीतों से स्वागत किया जाता है। वधू के यहाँ भी शुरू से ही गीत गाये जाते रहते हैं। फेरे लेने के बाद देवी देवताओं के यहाँ धोक दिलवाने के लिये उन्हें ले जाया जाता है। वहाँ भी गीत साथ देते हैं। इस अवसर पर जो गीत गाये जाते हैं उनकी संख्या १०० से ऊपर है। बरात के चले जाने पर पीछे से घर घर की स्त्रियां नृत्य और अभिनय करती हैं। इसी अवसर पर भात (माहेरा) के भी गीत गाये जाते हैं। इन गीतों में बधावा के गीत विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। कुछ प्रतिनिधि गीत दिये जारहे हैं—

(१) जलारे म्हे तो थारा डेरा निरखण आई ओ, म्हारी जोड़ी रा जला।

(२) ऊँची तो खीवैं ढोला बीजळी कोई नीची तो खीवैं जी नीवाण जी ढोला ।

(३) करला मारूजी पाछा जी मोड़, ओल्यूड़ी तो आवै म्हारै बाप री ।

(४) हेली रंगरो बधावो म्हारै नत नवो ए।

(५) म्हारै आँगण चिरमिटड़ी रो रूँख, म्हारा पिवजी कोई समधी रै आँगण केवड़ो जे ।

(६) आँखड़ली रै फरूकै ये म्हारो काग कटूकै पोळ मैं ए रँगरी-दासी जी राज ।

(७) हाँ हाँ भँवर म्हानै सुपनो जी आयोजी राज, सुपना रो अरथ बतावो जी राज ।

हिंडोलोत्सव

हिंडोलों का उत्सव मंदिरों में मनाया जाता है। यह श्रावण भाद्वे के महीनों में एक महीने तक मनाया जाता है। कहीं कहीं इन दिनों झाँकियाँ भी देखने को मिलती हैं। इनको एक एक दो दो पैसा चढ़ाया जाता है। स्त्रियां इनको देखने अधिक जाती हैं। मंदिरों में भगवान कृष्ण अथवा राम की मूर्तियों को झूले पर बिठाते हैं और झुलाते रहते हैं। सदैव गाने बजाने के कार्यक्रम इस उत्सव पर होते रहते हैं। इनमें कृष्ण गीत झूले से अधिक सम्बन्धित रहते हैं। गायकों की टोलियाँ कभी किसी मंदिर में कभी किसी में जाती रहती हैं। इस प्रकार महीने भर तक उल्लास का समय बीतता है। मंदिरों में खिलौने आदि रखकर उनको आकर्षित बनाया जाता है और सजावट का ध्यान भी होता है।

पुत्र जन्मोत्सव

राजस्थान में पुत्र-जन्म की बड़ी खुशी मनाई जाती है। पुत्र जन्म वंश की वृद्धि करता है, इस विचार के अनुसार यहाँ आनंद और उत्साह प्रकट किया जाता है। बच्चे के पैदा होने के लगभग एक माह बाद जच्चा को जो स्नान करवाया जाता है वह नहान के नाम से प्रसिद्ध है। इस दिन परवाले अपने सम्बन्धियों को निमंत्रित कर भोजन करवा

है। जच्चा को कुए के ऊपर ले जा कर जलवा पुजाई जाती है। स्त्रियों का दल साथ में गीत गाते हुए जाता है और गीत गाते हुए ही लौटता है—

> प्यारी लागे कुआ पर ओ ललना,
> थारे जिठाणी पाणी भरसी ओ ललना,
> ननदजी पर भोळा सिणगार।

यह 'जलवा पीळो' कहलाती है। नहान के दिन भी बहुत से गीत स्त्रियों के द्वारा गाये जाते हैं। ये गीत नवजात शिशु के सम्बन्ध में रहते हैं और जच्चा के सम्बन्ध में भी। इनकी पोशाकों के लिये न्यौछावर की जाती है। इस अवसर पर शिशु के लिये वस्त्र उसके ननिहाल तथा निकट सम्बन्धियों की ओर से आते हैं। शिशु के उत्पन्न होने की प्रसन्नता में रातिजगा किया जाता है जिसमें समस्त रात्रि भर स्त्रियाँ गीत गाती हैं। उत्सव पर अपने जाति वालों और सम्बन्धियों के यहाँ गेहूँ और चने की घूघरी बाँटी जाती है।

गीत इस प्रकार है—

(१) दिल्ली शहर को मायड पीळो मंगाओ जी,
तो हाथ पचीसी गज तीसी गाढा मारूजी,
पीळो मँगाओ जी।
पीळो तो ओढ म्हारी जच्चा पाटे पर बैठी जी,
तो देवर जिठाण्या भोत सरायो गाढा मारू जी।

(२) बड़ गीतस पहेरे चोलणो,
आवके बाबाजी नै देय असीस।
मेरा बापूजी जीवो लाख बरस,
मेरी मायड़ नैं सरव सुहाग।

गणेश चतुर्थी महोत्सव

गणेश चतुर्थी के दिन पाठशालाओं में यह उत्सव मनाया जाता है और गुरुजी की सवारी बैली या मोटर में निकलती है। साथ में गणेशजी और सरस्वतीजी की मूर्ति भी रहती है। बहुत से स्वांग साथ में उछलते कूदते निकलते हैं। ये स्वांग डाकण, बदर, मदारी, रीछ, राजा, राक्षस, महादेवजी, गणेशजी, सुग्रीव, वालि, हनुमान, आदि के रहते हैं। जुलूस धीरे धीरे चलता है। साथ में विद्यार्थी गीत गाते चलते हैं।

नगाड़े पर चोट पड़ती रहती है। साथ में खोमचे वाले भी रहते हैं। यह सवारी स्थानीय राजा के निवास स्थान गढ़ में जाती है और वहाँ से गुरुजी को २१) या ५१) रुपये भेंट किये जाते हैं। वहाँ से लौट कर सवारी पाठशाला में आ जाती है। आजकल गढ़ में लोक नृत्य भी करते हैं। यह नृत्य चार मात्रा के ठेके पर होता है।

महावीर जयन्ती

यह पवित्र उत्सव जैनियों के द्वारा ही नहीं मनाया जाता, परन्तु दूसरे धर्म को मानने वाले लोग भी इसे मनाते हैं। यह चैत्र सुदी १३ को आता है। सार्वजनिक स्थानों पर लोग सभायें करते हैं और जैन धर्म के २४ वें तीर्थंकर की प्रार्थना करते हैं।

रथयात्रा महोत्सव

हुम्मड़ जाति के वैश्य जो दिगम्बरी जैन हैं, उनके द्वारा एक रथ निकाला जाता है। इसमें अन्य जातियों के लोग भी भाग लेते हैं। चूड़ीदार पजामा, शेरवानी और पगड़ी पहनकर गोलाकार नृत्य डंकों से करते हैं। साथ में संगीत भी चलता है। यह जाति इस उत्सव को बड़े आमोद-प्रमोद और उत्साह से मनाती है।

गोपाष्टमी

गोपाष्टमी का जुलूस स्थानीय पींजरापोल से निकलता है। साथ में वहां की गायें भी रहती हैं और पुरुषों का झुंड उसके पीछे चलता है। बाजा बजता रहता है। स्त्रियां गायों को रोक कर उनको पूजती हैं और आँगी भेंट करती हैं। उस दिन गांव की पंचायत की ओर से सभी गायों के लिये दलिया रँधता है और प्रति गाय को एक एक परात खाने को मिलती है। गौशाला में लोग जाते हैं और गायों को खली खरीदकर खिलाते हैं। पिंजरापोल में यथा शक्ति १) या २) रु० जमा भी कराया जाता है। कहीं-कहीं इस दिन बछड़ों को दूध पूरा चूँघाया जाता है। गौशाला में उस दिन गायों के लिये विशेष खाद्य बनता है। गौशाला में मेला भी भरता है। सजावट होती है और भाषण भी दिये जाते हैं। दूकानें लगती हैं।

संभया

इस पक्ष में सायंकाल घरों के बाहर गोबर से बालिकाएँ संभया मँडती हैं। यह कार्यक्रम १५ दिन तक चलता रहता है। ये प्रतिदिन नई आकृति बनाती हैं। इन आकृतियों में चाँद, सूरज, चौपड़, बीजनी, कलश आदि हैं। पितृपक्ष समाप्त होने पर संभया को हटा कर उसको पानी में विसर्जित कर दिया जाता है। दशहरे के दिन इसका उजमणा (स्नान) होता है। इस दिन ढोली को भेंट दी जाती है जो ढोल बजाता है। मोहल्ले की बालिकाएँ गायन करती हैं और उत्सव मनाती हैं। संभया चूँकि बालिकाओं का त्यौहार है, अतएव इसके गीत बहुत छोटे होते हैं।

संभया का मूर्तिकरण (Personification) कर दिया गया है। बेटी का पितृ पक्ष से सम्बन्ध अर्थात् पितागणों से सम्बन्ध स्वाभाविक ही है। संभया के अन्तिम चित्र में उसको सुसराल विदा करदी जाती है। इस प्रकार कुँवारी कन्याओं के लिए संभया मनोवैज्ञानिक दृष्टि से स्वाभाविक है। यह आँगनों के माँडणों और हाथों पर मेंहदी माँडने के लिये कलात्मक शिक्षण भी देती है। संभया का एक गीत दिया जारहा है—

'गुड़ गुड़ घुड़ल्यो गुड़तो जाय
जी में म्हारा संभया बाई बैठ्या जाय।'

कोटा, झालावाड़ और मेवाड़ की ओर यह उत्सव विशेष प्रचलित है। आश्विन मास का पूरा कृष्ण पक्ष इस उत्सव को दिया जाता है।

गवरी उत्सव

यह भादवा वदी १० को मनाया जाता है। यह भीलों का महोत्सव है। इस दिन उनके गौरी नृत्य का अवसान होता है। साथ में गांव के लोग भारी संख्या में रहते हैं और उत्सव के साथ चलते हैं। मार्ग में भील स्त्रियां नाचती-गाती रहती हैं। मिट्टी के बने हाथी पर मिट्टी की बनी हुई गौरी और शिव की मूर्तियाँ रहती हैं। चँवर डुलाये जाते हैं। रुई के कपड़े बदले जाते हैं। गाँव के लोग १२ मन का प्रसाद तैयार करते हैं। घूघरी भी बाँटी जाती है। गवरी के नृत्यकार उसे खा कर अपने घरों को जाते हैं। सवा महीने तक बराबर नाचा जाने वाला गौरी नृत्य आज के दिन पूर्ण हो जाता है और गौरी—शिव को सरोवर या नदी में धारा देते हैं।

१५ अगस्त स्वतंत्रता दिवस

इस दिन भारतीय स्वतंत्रता दिवस मनाया जाता है सार्वजनिक संस्थाएँ विशेष मनाती हैं। पाठशालाओं के विद्यार्थी कवायद होती है। सार्वजनिक सभायें होती हैं और झाँकियाँ भी जाती हैं। स्कूलों में भाषण, कविता पाठ, लोकगीत, एकांकी, आदि का कार्यक्रम रहता है। झंडियों आदि बाँधी जाती हैं और रा गाया जाता है। शहीदों को इस दिन याद करते हैं।

२६ जनवरी (गणतंत्र दिवस)

इस दिन भारत का विधान देश में लागू हुआ था। शिक्षण सं विशेषतः इस उत्सव को मनाती हैं। राष्ट्र गान होता है और भ कविता पाठ, गायन, अभिनय प्रहसन आदि के कार्यक्रम रहते स्वांग भी निकाले जाते हैं।

१ नवम्बर (राजस्थान दिवस)

राजस्थान के एकीकरण की स्मृति में यह उत्सव मनाया है। सार्वजनिक एवं शिक्षण संस्थाओं में राजस्थान और उसकी के सम्बन्ध में भाषण होते हैं। राजस्थान की राजधानी जयपुर में अन्य प्रमुख स्थानों में यह उत्सव बड़े उत्साह से मनाया जाता है। अवसर पर आकाशवाणी जयपुर से विशेष कार्यक्रम प्रसारित हो और राजस्थान सरकार की ओर से लोक संगीत और लोक नृत्यों के आयोजन होते हैं।

अध्याय ३

राजस्थान के मेले

सांस्कृतिक मेलों से हमारा तात्पर्य उन मेलों से है जिनमें लोक नृत्य अथवा लोक गीत का आयोजन होता हो।

मेल शब्द से ही मेला का सम्बन्ध है। ग्रामीण मेलों में हम देखते हैं कि जानबूझकर अपने साथी मित्रों से मिला जाता है। मेलों का उद्देश्य हमारी प्रसन्नता को बढ़ाना ही रहा है। कई गाँवों के अथवा कस्बों, शहरों के आदमी जो काम काज में अधिक व्यस्त रहने के कारण परस्पर में मिल नहीं पाते हैं वे उस अवसर पर एक साथ मिल जाते हैं। यदि कोई आदमी एक एक आदमी से मिलने निकले तो समय और अर्थ की बड़ी हानि हो किन्तु मेलों के अवसर पर उस प्रकार की हानि से बच जाते हैं। मेले में बहुसंख्या में लोग एकत्रित होते हैं। इस प्रकार हममें जातीय और राष्ट्रीय भावना भरती है। त्यौहार और उत्सव एक एक गाँव में मनाये जाते हैं किन्तु मेलों में गाँव के गाँव उमड़ पड़ते हैं। मेलों में बहुत से फैसले किये जाते हैं। कोई समस्या मिलकर सुलझाई जाती है। आदिम जातियों में तो विवाह भी मेलों में तय होते हैं। इस प्रकार मेलों के पीछे मिलने-जुलने की भावना प्रधान रही है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और सामूहिक जीवन से उसका उल्लास भी बढ़ता है। मेलों में प्रेम और मित्रता दृढ़ होती है।

मेले किसी लोक नायक की स्मृति में भी भरते हैं। वे उसकी याद दिलाते हैं। यह आदर्श चरित्र हमारे सामने रहता है और हमको भी अपने आपको वैसा बनाने को प्रेरित करता है। इस प्रकार लोक नायकों का स्मरण हमारे जीवन के लिये महत्त्वपूर्ण होता है। यह हममें शौर्य और पौरुष का भाव भरता है। वीर पूजा की भावना इन मेलों में देखी जाती है। उदाहरण में हम पाबूजी राठौड़, गोगाजी चौहान, तेजाजी जाट का नाम ले सकते हैं। ये लोग किसी महान उद्देश्य के लिये अपना जीवन अर्पित करते हैं।

१५ अगस्त स्वतंत्रता दिवस

इस दिन भारतीय स्वतंत्रता दिवस मनाया जाता है। उसको सार्वजनिक संस्थाएँ विशेष मनाती हैं। पाठशालाओं के विद्यार्थियों की कवायद होती है। सार्वजनिक सभायें होती हैं और झाँकियाँ भी निकाली जाती हैं। स्कूलों में भाषण, कविता पाठ, लोकगीत, एकांकी, अभिनय आदि का कार्यक्रम रहता है। झंडियाँ आदि बाँधी जाती हैं और राष्ट्रगान गाया जाता है। शहीदों को इस दिन याद करते हैं।

२६ जनवरी (गणतंत्र दिवस)

इस दिन भारत का विधान देश में लागू हुआ था। शिक्षण संस्थायें विशेषतः इस उत्सव को मनाती हैं। राष्ट्र गान होता है और भाषण, कविता पाठ, गायन, अभिनय प्रहसन आदि के कार्यक्रम रहते हैं। स्वांग भी निकाले जाते हैं।

१ नवम्बर (राजस्थान दिवस)

राजस्थान के एकीकरण की स्मृति में यह उत्सव मनाया जाता है। सार्वजनिक एवं शिक्षण संस्थाओं में राजस्थान और उसकी प्रगति के सम्बन्ध में भाषण होते हैं। राजस्थान की राजधानी जयपुर में और अन्य प्रमुख स्थानों में यह उत्सत बड़े उत्साह से मनाया जाता है। इस अवसर पर आकाशवाणी जयपुर से विशेष कार्यक्रम प्रसारित होता है और राजस्थान सरकार की ओर से लोक संगीत और लोक नृत्यों आदि के आयोजन होते हैं।

अध्याय ३

राजस्थान के मेले

सांस्कृतिक मेलों से हमारा तात्पर्य उन मेलों से है जिनमें लोक नृत्य अथवा लोक गीत का आयोजन होता हो।

मेल शब्द से ही मेला का सम्बन्ध है। ग्रामीण मेलों में हम देखते हैं कि जानबूझकर अपने साथी मित्रों से मिला जाता है। मेलों का उद्देश्य हमारी प्रसन्नता को बढ़ाना ही रहा है। कई गाँवों के अथवा कसबों, शहरों के आदमी जो काम काज में अधिक व्यस्त रहने के कारण परस्पर में मिल नहीं पाते हैं वे उस अवसर पर एक साथ मिल जाते हैं। यदि कोई आदमी एक एक आदमी से मिलने निकले तो समय और अर्थ की बड़ी हानि हो किन्तु मेलों के अवसर पर उस प्रकार की हानि से बच जाते हैं। मेले में बहुसंख्या में लोग एकत्रित होते हैं। इस प्रकार हममें जातीय और राष्ट्रीय भावना भरती है। त्यौहार और उत्सव एक एक गाँव में मनाये जाते हैं किन्तु मेलों में गाँव के गाँव उमड़ पड़ते हैं। मेलों में बहुत से फैसले किये जाते हैं। कोई समस्या मिलकर सुलझाई जाती है। आदिम जातियों में तो विवाह भी मेलों में तय होते हैं। इस प्रकार मेलों के पीछे मिलने-जुलने की भावना प्रधान रही है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और सामूहिक जीवन से उसका उल्लास भी बढ़ता है। मेलों में प्रेम और मित्रता दृढ़ होती है।

मेले किसी लोक नायक की स्मृति में भी भरते हैं। ये उसकी याद दिलाते हैं। वह आदर्श चरित्र हमारे सामने रहता है और हमको भी अपने आपको वैसा बनाने को प्रेरित करता है। इस प्रकार लोक नायकों का स्मरण हमारे जीवन के लिये महत्त्वपूर्ण होता है। यह हममें वीरत्व और पौरुष का भाव भरता है। वीर पूजा की भावना बहुत से देशों में देखी जाती है। उदाहरण में हम पाबूजी राठौड़, गोगाजी चौहान, तेजाजी जाट का नाम रख सकते हैं। ये लोग किसी महान् उद्देश्य के लिये अपना जीवन अर्पित करते हैं।

१५ अगस्त स्वतंत्रता दिवस

इस दिन भारतीय स्वतंत्रता दिवस मनाया जाता है। उसको सार्वजनिक संस्थाएँ विशेष मनाती हैं। पाठशालाओं के विद्यार्थियों की कवायद होती है। सार्वजनिक सभायें होती हैं और झाँकियाँ भी निकाली जाती हैं। स्कूलों में भाषण, कविता पाठ, लोकगीत, एकांकी, अभिनय आदि का कार्यक्रम रहता है। झंडियाँ आदि बाँधी जाती हैं और राष्ट्रगान गाया जाता है। शहीदों को इस दिन याद करते हैं।

२६ जनवरी (गणतंत्र दिवस)

इस दिन भारत का विधान देश में लागू हुआ था। शिक्षण संस्थायें विशेषतः इस उत्सव को मनाती हैं। राष्ट्र गान होता है और भाषण, कविता पाठ, गायन, अभिनय प्रहसन आदि के कार्यक्रम रहते हैं। स्वांग भी निकाले जाते हैं।

१ नवम्बर (राजस्थान दिवस)

राजस्थान के एकीकरण की स्मृति में यह उत्सव मनाया जाता है। सार्वजनिक एवं शिक्षण संस्थाओं में राजस्थान और उसकी प्रगति के सम्बन्ध में भाषण होते हैं। राजस्थान की राजधानी जयपुर में और अन्य प्रमुख स्थानों में यह उत्सत बड़े उत्साह से मनाया जाता है। इस अवसर पर आकाशवाणी जयपुर से विशेष कार्यक्रम प्रसारित होता है और राजस्थान सरकार की ओर से लोक संगीत और लोक नृत्यों आदि के आयोजन होते हैं।

मासों में सब जगह वर्षा ऋतु के कारण फसल पक जाती है, इन महीनों में राजस्थान में सबसे अधिक मेले लगते हैं। इस प्रकार क्रय-विक्रय की दृष्टि से भी मेले लगते हैं—जैसे पर्वतसर, नागौर, भरतपुर, गोगामेड़ी आदि के पशु मेले।

इन मेलों के पीछे भी आनंद की ही भावना रही है। आर्यसंस्कृति में आशा, उत्साह और उल्लास का महत्त्वपूर्ण स्थान है। आर्य बड़े महत्त्वाकांक्षी, साहसी और वीर थे। अतएव हमारे जीवन में आनन्द का स्थान बहुत रहा है। यही कारण है हमारे देश में त्यौहार और उत्सव मिलते हैं। जिस देश में खुशहाली नहीं होती उस देश में इतनी बड़ी संख्या में त्यौहार अथवा मेले नहीं रह सकते। भारतवर्ष प्राकृतिक दृष्टि से भी धनधान्य पूर्ण देश है। मानसूनों जलवायु तथा पर्वतीय प्रदेशों के कारण यहाँ का प्राकृतिक सौन्दर्य विश्व विख्यात है। राजस्थान यद्यपि रेतीला प्रदेश है किन्तु मेलों की सर्जना करके यहाँ के आदि पुरुषों ने इस आनंद को बनाये रखने की चेष्टा की है।

मेलों के अवसर पर भिन्न भिन्न जातियों के अलंकरणों, वेश-भूषाओं, रीति रिवाजों और परम्पराओं के दर्शन होते हैं। अतएव ये किसी देश और समाज की संस्कृति को उपस्थित करते हैं।

सांस्कृतिक मेले

जोधपुर डिविजन—

जिला जालोर

फाजली मेला—भादवा सुदी ४ को यह मेला जालोर में भरता है। माली जाति (जुलाहे) अपने घरों से झुंडों में हो कर निकलते हैं और मुख्य बाजार में से नृत्य करते हुए जाते हैं। वे साथ में नये उगाये हुए जौं से युक्त बर्तनों को ले कर कसबे के दरवाजे के बाहर जाते हैं। आगामी फसल के लिये शकुन भी इसमें वे लेते हैं।

नागपंचमी—जालोर के सिरेह मंदिर में भादवा वदी ५ को यह भरता है। यहाँ महादेवजी की पूजा होती है। प्राकृतिक सौन्दर्य का आनंद भी इसमें उठाया जाता है। रायसीन का मेला—शिवरात्रि को यह मेला भरता है, शिव की मूर्ति दर्शनीय है।

संत महात्मा लोग भारत भूमि में बहुत होते रहे हैं। भारतवर्ष एक आध्यात्मिक देश है। लोक कल्याणार्थ ही अपना जीवन बिताते हैं। इनका जीवन भी बहुत त्यागपूर्ण होता है। बहुत ही कम वस्त्र और भोजन तथा साधारण निवास स्थान से ये अपना काम चला लेते हैं और हरि भजन में अपना समय देते हैं। इन लोगों के सम्पर्क से सत्संग का वातावरण बना रहता है। संत रामदेवजी की स्मृति में रामदेवरा का मेला भरता है।

सभी देशों में मनुष्य ने अपनी दुर्बलता और अपनी सीमा समझी है। उसने यह अनुभव किया है कि कोई ऐसी शक्ति संसार में विद्यमान है जो मनुष्य से कहीं अधिक शक्तिशाली है। उसी को उसने परमात्मा का नाम दिया। धीरे धीरे इन भिन्न भिन्न शक्तियों के नाम दिये गये। मनुष्य ने उनको पूजना शुरु किया और उनको प्रसन्न करने का प्रयत्न किया। गणगौर, भैरू, हनुमान तथा देवियों के मेले इसी उद्देश्य से लगते हैं।

प्राकृतिक सुन्दरता का मनुष्य पर असर होता है। कई मेले सरोवरों—तालावों के पास, खुले मैदानों में, पहाड़ी भागों में, झरनों के समीप, और नदियों के संगम अथवा उद्गम स्थानों में लगते हैं। जैसे कोलायत, पुष्कर, गळता, लोहार्गल आदि के मेले। इसी प्रकार श्रावण और भादवे के महीने में सबसे अधिक मेले भरते हैं। अकेले श्रावण में ही प्रति सोमवार को मेला भरता है। इन महीनों में सर्वत्र हरियाली रहती है। रामदेवजी, गोगाजी, लोहार्गल, चारभुजा आदि के मेले इन्हीं महीनों में लगते हैं।

खुशियाली का अवसर

आर्थिक प्रश्न मानव का सबसे बड़ा प्रश्न है। समृद्धि प्रसन्नता को बढ़ाती है और उसी के साथ सब गाजे-बाजे रहते हैं। जिस वर्ष फसल अच्छी नहीं होती है, उस वर्ष मेले फीके ही रहते हैं। खुशी भी आदमी को अन्न समस्या हल होने पर ही सूझती है। जिस वर्ष फसल अच्छी होती है तो उस वर्ष मेले भी जोरदार लगते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि अच्छी फसल के साथ मनुष्य को अपने चारों ओर समृद्धि दिखलाई पड़ती है, उसी समृद्धि के कारण खुशियाली भी है। सावण-

भादवे में जब जगह वर्षा ऋतु के कारण फसल पक जाती है, उन महीनों में राजस्थान में सबसे अधिक मेले लगते हैं। इस प्रकार क्रय-विक्रय की दृष्टि से भी मेले लगते हैं—जैसे परबतसर, नागौर, भरतपुर, गोगामेड़ी आदि के पशु मेले।

इन मेलों के पीछे भी आनंद की ही भावना रही है। आर्यसंस्कृति में आशा, उत्साह और उल्लास का महत्त्वपूर्ण स्थान है। आर्य बड़े महत्त्वाकांक्षी, साहसी और वीर थे। अतएव हमारे जीवन में आनंद का स्थान बना रहा है। बड़ी संख्या में हमारे देश में त्यौहार और उत्सव मिलते हैं। जिस देश में खुशियाली नहीं होती उस देश में इतनी बड़ी संख्या में त्यौहार अथवा मेले नहीं रह सकते। भारतवर्ष प्राकृतिक दृष्टि से भी धनधान्य पूर्ण देश है। मानसूनी जलवायु तथा पर्वतीय प्रदेशों के कारण यहाँ का प्राकृतिक सौन्दर्य विश्व विख्यात है। राजस्थान यद्यपि रेतीला प्रदेश है किन्तु मेलों की सर्जना करके यहाँ के आदि पुरुषों ने इस आनंद को बनाये रखने की चेष्टा की है।

मेलों के अवसर पर भिन्न भिन्न जातियों के अलंकरणों, वेश-भूषाओं, रीति रिवाजों और परम्पराओं के दर्शन होते हैं। अतएव ये किसी देश और समाज की संस्कृति को उपस्थित करते हैं।

सांस्कृतिक मेले

जोधपुर डिविज़न—

जिला जालोर

काजली मेला—भादवा सुदी ४ को यह मेला जालोर में भरता है। मालवी जाति (जुलाहे) अपने घरों से झुंडों में हो कर निकलते हैं और मुख्य बाजार में से नृत्य करते हुए जाते हैं। वे साथ में नये उगाये हुए जौ से युक्त बर्तनों को ले कर कसबे के दरवाजे के बाहर जाते हैं। आगामी फसल के लिये शकुन भी इसमें वे लेते हैं।

नागपचमी—जालोर के सिरेह मंदिर में भादवा वदी ५ को यह भरता है। यहाँ महादेवजी की पूजा होती है। प्राकृतिक सौन्दर्य का आनंद भी इसमें उठाया जाता है। रायसीन का मेला—शिवरात्रि को मेला भरता है, शिव की मूर्ति दर्शनीय है।

माताजी का मेला—मोदराँ गाँव में हरवर्ष चैत सुदी ८ को भरता है। पीरों का मेला—(तहसील साँचोर) फागुन के महीने में पहाड़पुरा गाँव में यह मेला लगता है। पहाड़पुरा से दो मील दूर जगल में जाळ के पेड़ के नीचे एक दरगाह है। यहाँ मुआफी की जमीन है। जब उर्स होता है तब दूर दूर से कव्वाल आते हैं।

तुरनका मेला—आसोज सुदी १३ को महादेवजी की पूजा के लिये भरता है। सांचोर का पशु मेला—चैत सुदी ११ से वैसाख वदी तक भरता है।

जैसलमेर जिला

लुद्रवा में जैनियों का मेला भरता है। इसमें दूर दूर से जैन यात्री आते हैं। यहाँ की पत्थर की बनी इमारतें वास्तुकला के अद्वितीय नमूने हैं। यह स्थान जैसलमेर से ६ मील दूर है और एक प्राचीन ऐतिहासिक स्थान है।

गणगौर के अवसर पर किले से एक बड़ी मूर्ति निकलती है और शहर की जनता के साथ गढीसर तालाव तक ले जाई जाती है। यहाँ स्त्रियों की वेशभूषा की रंगीनी विशेष होती है। इसी प्रकार यहाँ शीतलाष्टमी पर भी सांस्कृतिक मेला लगता है। इस जिले में सांस्कृतिक मेले कम ही देखने में आते हैं। यों बड़े बाग (जैसलमेर), गजरूप सागर का मेला भादवा सुदी ६, ७ और माघ सुदी ६, ७ को भरता है तथा काला डूँगर का मेला जैसलमेर से १८ मील दूर, बद्रिया का मेला—भादवा सुदी १३–१४ और माघ सुदी १३–१४ को भरता है।

जिला नागौर

पारसनाथजी का मेला–यह जैनियों का मेला है किन्तु सुदूर स्थानों से सभी जाति के लोग इसमें शामिल होते हैं। यह भादवा सुदी १०-११ को मेड़तारोड में भरता है। मेड़ता में पार्श्वनाथ भगवान के मंदिर से एक जैनियों का जुलूस शुरु होता है और धार्मिक प्रकृति के गीत और भजन जनसमुदाय गाते हैं।

धाला पीरजी का मेला—कुमारी गांव में मगसर सुदी ७ को यह भरता है। इसमें मुसलमान शामिल होते हैं।

नरसिंह चतुर्दशी—वैसाख सुदी १४ को सभी जातियों के लोगों के द्वारा यह भरता है।

दधिमति माता का मेला—गोर मंगलोद नामक गांव में यह भरता है। यह नागौर तहसील में है। चैत और आसोज के महीने में वर्ष में यह दो बार भरता है। दधिमति माता देवियों में बड़े आदर से देखी जाती है।

हनूमानजी (सालासर), यह स्थान बीकानेर, मारवाड़ और शेखावाटी की सीमाएं जहां मिलती हैं उस पर स्थित है। यहां सीकर, लछमणगढ़ और सुजानगढ़ से मोटरें आती हैं। सुजानगढ़ तक पक्की सड़क है। यह वर्ष में दो बार चैत सुदी १५ और कार्तिक सुदी १४ को भरता है। हनूमानजी के भजन गाये जाते हैं। मेले में हजारों यात्री आते हैं। छत्र सोने, चांदी के चढ़ते हैं और चूरमा आदि बनता है। यात्रियों के ठहरने के लिये धर्मार्थ पक्के स्थान सेठों ने बना रक्खे हैं। मंदिर में प्रतिदिन कथा, भजन होते हैं। यह डीडवाना तहसील में है।

तेजाजी का मेला—(परबतसर) तेजाजी जाति के जाट थे और ये गायों की रक्षा में काम आये। लोगों में ऐसा विश्वास है कि तेजाजी की आराधना से सांप का विष दूर हो जाता है और पशुओं की बीमारी चली जाती है। ये किशनगढ़ राज्य में ब्याहे थे। इनका जन्म नागौर जिले में खड़नाल नामक गांव में हुआ था। इनका मेला भादवा सुदी १० को भरता है। इस अवसर पर पशुओं का बड़ा भारी मेला लगता है और बिक्री होती है। तेजाजी के भक्त तेजाजी का पवाड़ा गाते हैं। खेती के प्रारम्भ में भी जाट लोग तेजाजी का गीत गाते हैं।

सिरोही जिला

वामनवाड़ का मेला—यह होली के अवसर पर इससे तीन दिन पूर्व होता है। इसमें गरासिये नृत्य करते हैं और गाते हैं। यह [illegible] का भी तीर्थ स्थान है।

सुड़या धलेश्वर का मेला—कभी तीन साल में, कभी [illegible] साल में, कभी १२ नक्षत्रों के इकट्ठा होने पर लगता है। इसमें [illegible] के गीत और भजन औरतें गाती हैं।

छोटी और बड़ी तीज पर घोमारे के गीत गाये जाते हैं और मेला लगता है।

वामनवाव जी का मेला—जिले का यह सबसे बड़ा मेला है। यह पिंडवारा तहसील में है। यह फागुन मास में ११-१४ को भरता है।

मारकेश्वरजी का मेला—यह शिवरात्री को भरता है। सिरोही के शासक देवड़ा परिवार के महादेव इष्टदेव हैं।

मातृमाता का मेला—यह मातृमाता के पठार पर भरता है। यहाँ माताजी का एक मंदिर है।

ऋषिकेश का मेला—निर्जला एकादशी को भरता है। इसमें भी नृत्य होते हैं।

ध्वजा ग्यारस—यह भादों शुक्ला ११ को भरता है। यह जल भूलनी ग्यारस का दिन है। उस दिन मन्दिरों की ध्वजा फहराई जाती है। कई स्थानों पर हाथी पर देवता की मूर्ति को बैठा कर ले जाया जाता है। वे लोग मंदिरों में जाते हैं और अपने इष्ट देवों की पूजा करते हैं। वे भजन भी गाते हैं। साधुओं को भिक्षा दी जाती है और मंदिरों को उपहार चढ़ाते हैं। अपने अपने देवताओं की पालकियों को मंदिरों के पुजारी ले जाते हैं और किसी जलाशय के पास ले जा कर उन्हें स्नान करवाते हैं। शहर में इनका जुलूस गाजे-बाजे से निकाला जाता है। कहीं कहीं ये पालकियाँ सम्बन्धित मेले में भी ले जाई जाती हैं।

उदयपुर में पीछोला झील पर यह उत्सव मनाया जाता है। इस जुलूस को रेवाड़ी कहते हैं। सिरोही में लाखोरी तालाब के किनारे बड़े उत्साह से इसे मनाते हैं। इसमें रैबारी नाचते हैं।

फलौदी

रामदेवजी का मेला—(रामदेवरा)। रामदेवरा एक स्टेशन है जो जोधपुर से पोकरण जाने वाली रेल पर पड़ता है। यहाँ रामदेवजी का स्थान है। रामदेवजी एक धार्मिक प्रकृति के संत हुए जिन्होंने लोगों को कई चमत्कार बतलाये। इन्होंने सं० १४६१ में भादवा सुदी २ शनिवार जन्म लिया था। इनके भाई का नाम वीरमदे, पिता का नाम . . और बहिनों का नाम लाछा और सुगना था। इनकी माता का मनादे था। रामदेवजी ने समींचा नामक स्थान पर जन्म लिया

था। ये राजपूतों की तुँवर शाखा में पैदा हुए थे। इन्होंने १४ वर्ष की उम्र में भैरव नामक एक वैश्य राक्षस को मारा था। श्री रामदेवजी ने १५१५ की भादवा सुदी ११ के दिन रुणीचा गाँव के रामसरोवर पर जीवित समाधि ली थी। राम सरोवर भी आपके ही प्रयत्नों से बना था। यात्रियों के ठहरने के लिये धर्मशालायें भी हैं। यात्री प्रायः बाहर ही सोते हैं। भादवा और माघ के महीने में मेला भरता है। भादवा के पूरे महीने भरता है। रामदेवजी के सम्बन्ध में गीत गाये जाते हैं। रामदेवजी पीर माने गये हैं अतएव मुसलमान भी यहाँ आते हैं। इनके नारियल, मखाने, चूरमा आदि का चढावा है। लोग रामदेवजी का कपड़े का घोड़ा कंधे पर रखकर नाचते हैं। रामदेवजी की आरती इस प्रकार है—

> पीछम धरॉ सूँ मारा पीरजी पधारिया,
> घर अजमल अवतार लियो।
> लाछाँ, सुगना बाई करे हर री आरती,
> हरजी मारी चॅवर ढोले।

एक प्रचलित गीत इस प्रकार है—

> बरसा गैरी गैरी भाईड़ा पाछा फॉकर जाओ,
> मनैं सांचौ सांचौ भेद बताओजी ओ,
> खमा खमा।
> खमा मारे द्वारकारे नाथ ने।

रामदेवजी का एक ब्यावला भी गाकर सुनाया जाता है। ये अमरकोट के दलाजी नामक सोढा राजपूत की लड़की नेतलदे को ब्याहे थे। अमर कोट अब पाकिस्तान में चला गया है। रामदेवजी की बहिन पूँगलगढ़ ब्याही थी। यह बीकानेर डिविजन में है।

रामदेवजी के मेले राजस्थान में बहुत स्थानों पर भाद्रपद शुक्ला १० को भरते हैं। रामदेवजी के पुजारी चमार होते हैं जो रिखिया अथवा [illegible] कहलाते हैं। ये लोग रामदेवजी की रात जगाते हैं और चढावा भी वे ही लेते हैं। इनकी मूर्ति भी [illegible] में [illegible]न्य स्थानों पर गाया जाने वाला रामदेवजी का गीत

उदयपुर डिवीजन

उदयपुर पहाड़ी प्रदेश है। इसमें डूँगरपुर और बाँसवाड़ा जिले भी आ जाते हैं। यहाँ पर धार्मिक मान्यताएँ और विश्वास अधिक पाये जाते हैं। यह आदिम जातियों का भी क्षेत्र है जिनमें नृत्य और गीत बहुत पाये जाते हैं। फल स्वरूप यहाँ सांस्कृतिक मेले राजस्थान में सबसे अधिक मिलते हैं। पहाड़ी स्थानों में आवागमन की इतनी सुविधा नहीं रहती जितनी रेगिस्तानी भागों में। रेगिस्तानी भागों में ऊँट, बैल, मोटर आदि फिर भी चल सकते हैं किन्तु पहाड़ी भागों में यह भी बड़ा दुष्कर है। परिणाम स्वरूप बाहरी सभ्यता का प्रभाव इधर कम हो पहुँच सकता है। मानवीय सम्पर्क भी पहाड़ी क्षेत्रों में कम हो पाता है। अतएव इस क्षेत्र में धार्मिक एवं दैविक विश्वास अभी भी बहुत अधिक हैं। यहाँ सैंकड़ों देवी देवता मिलते हैं जिनके प्रति सप्ताह छोटा सा मेला लगा रहता है और गीत आदि भी गाये जाते हैं। नीचे प्रमुख लोक-देवता एवं देवी देवताओं के यहाँ भरने वाले तथा अन्य सांस्कृतिक मेलों को लिखा जा रहा है।

देवनारायण—राजपूतों की बगड़ावत शाखा में इन्होंने जन्म लिया था और अपने पिता रावत भोज का बदला लिया था। इनकी एक प्रतिमा चित्तौड़ के गढ़ पर आज भी देखी जा सकती है। पड़िहार राजपूतों ने इनके पिता को मार दिया था। ये लोक देवता माने जाते हैं, उसी प्रकार जिस प्रकार पाबूजी राठौड़, गोगाजी और रामदेवजी। ज्यादातर इनको गूजर और मेवाड़ी गायरी पूजते हैं। इनके जन्म का स्थान चाँदलिया गाँव माना जाता है जो मेवाड़ और मारवाड़ की सीमा पर है। भोपा को गोल पहनाया जाता है। इनके भी पवाड़े गाये जाते हैं। शनिवार (थावर) के दिन इनकी पूजा होती है। माही मास और उजली भादवा छठ को मेला भरता है। मोरेला गाँव में इनकी मूर्तियां बनाई जाती हैं।

कालागोरा—ये कालिका के पुत्र हैं और भैरों के दो रूप हैं। इनके साथ बावन वीर और चौंसठ जोगनियां रहती हैं। चुड़ैल, डाकन, भूत, पलीत, जिस को ये काबू में रखते हैं। काले का वाहन कुत्ता है। ये शिव के मुख्य गणों में हैं। रविवार को इनकी पूजा होती है। इनके यहाँ जागरण माही चतुर्थी से शुरू होता है और पञ्चमी तक रहता है।

'कोठे तो थाजा बाजिया कँवरजी
कोठे तो गेरया छै निसान
ओ महाराज अम्बर घड़ी।'

पाबूजी का मेला—पाबूजी के पिताजी का नाम धाँधलजी था। ये राठौड़ वंश में पैदा हुए थे। फलौदी से लगभग १८ मील दूर कोलूगढ़ में इनका मंदिर है जहाँ प्रतिवर्ष बड़ा भारी मेला भरता है। इसमें पाबूजी के भोपे बहुत बड़ी संख्या में इकट्ठे होते हैं। पाबूजी नायकों के इष्ट देव हैं। इनका जन्म सं० १३४१ के लगभग और मृत्यु १३८२ के लगभग मानी जाती है। ये वचन के बड़े पालक थे और अपने वचन को निभाते हुए ही काम आये थे। अपने विवाह के समय भाँवर लेते हुए ये बीच में ही चले आये। इनका विवाह अमरकोट में हो रहा था। गायों की रक्षा में काम आने के कारण ये लोक-जीवन में देव तुल्य पूजे जाते हैं। अपने वचन की पूर्ति में ये लंकथली से सॉड सॉडणी (ऊँटों का टोळा) भी लाये थे। ये बड़े वीर और साहसी थे। उन्होंने देवड़ों और डीडवाना के गोड क्षत्रियों पर विजय पाई थी। इनकी स्मृति में बहुत से पवाड़े बने हुए हैं। भोपे इनको रात भर गाकर सुनाते हैं। यह पाबूजी की पड़ कहलाती है। ये भोपे मारवाड़ में कई स्थानों पर बसे हुए हैं और राजस्थान के कई भागों में रावणहत्थे के साथ घूमते रहते हैं। ये अपने साथ एक चित्रित-परदा भी रखते हैं जिसमें पाबूजी के जीवन सम्बन्धी कई चित्र बने हुए रहते हैं। यह पड़ २५-३० फीट लम्बी होती है।

जिला बाड़मेर

कपलेश्वर, विशन पगलिया सुया मेला—सोमवती अमावस्या को बाड़मेर से ३२ मील दूर चहितान में यह मेला भरता है। इन तीनों स्थानों की परिक्रमा की जाती है। यहाँ पानी के झरने भी हैं।

पंचतीर्थी—ये पाँच स्थान अपने नामों से प्रसिद्ध हैं और इनकी भी परिक्रमा दी जाती है। एक अच्छा मेला लगता है। पांचों स्थान पहाड़ियों पर स्थित हैं। नकोरा पार्सनाथ—पौषबदी १० को हर वर्ष यह मेला लगता है। इसमें जैन सम्प्रदाय के लोग हर वर्ष बड़ी संख्या में एकत्रित होते हैं।

उदयपुर डिवीजन

उदयपुर पहाड़ी प्रदेश है। इसमें डूँगरपुर और बाँसवाड़ा जिले भी आ जाते हैं। यहाँ पर धार्मिक मान्यताएँ और विश्वास अधिक पाये जाते हैं। यह आदिम जातियों का भी क्षेत्र है जिनमें नृत्य और गीत बहुत पाये जाते हैं। फल स्वरूप यहाँ सांस्कृतिक मेले राजस्थान में सबसे अधिक मिलते हैं। पहाड़ी स्थानों में आवागमन की इतनी सुविधा नहीं रहती जितनी रेगिस्तानी भागों में। रेगिस्तानी भागों में ऊँट, बैल, मोटर आदि फिर भी चल सकते हैं किन्तु पहाड़ी भागों में यह भी बड़ा दुष्कर है। परिणाम स्वरूप बाहरी सभ्यता का प्रभाव इधर कम ही पहुँच सकता है। मानवीय सम्पर्क भी पहाड़ी क्षेत्रों में कम हो पाता है। अतएव इस क्षेत्र में धार्मिक एवं दैविक विश्वास अभी भी बहुत अधिक हैं। यहाँ सैंकड़ों देवी देवता मिलते हैं जिनके प्रति सप्ताह छोटा सा मेला लगा रहता है और गीत आदि भी गाये जाते हैं। नीचे प्रमुख लोक-देवता एवं देवी देवताओं के यहाँ भरने वाले तथा अन्य सांस्कृतिक मेलों को लिखा जा रहा है।

देवनारायण—राजपूतों की बगड़ावत शाखा में इन्होंने जन्म लिया था और अपने पिता रावत भोज का बदला लिया था। इनकी एक प्रतिमा चित्तौड़ के गढ़ पर आज भी देखी जा सकती है। पड़िहार राजपूतों ने इनके पिता को मार दिया था। ये लोक देवता माने जाते हैं, उसी प्रकार जिस प्रकार पाबूजी राठौड़, गोगाजी और रामदेवजी। ज्यादातर इनको गूजर और मेवाड़ी गायरी पूजते हैं। इनके जन्म का स्थान चाँदलिया गाँव माना जाता है जो मेवाड़ और मारवाड़ की सीमा पर है। भोपा को गोज पहनाया जाता है। इनके भी पवाड़े गाये जाते हैं। शनिवार (थावर) के दिन इनकी पूजा होती है। भादो मास और ऊजली भादवा छठ को मेला [illegible] है। कोटेला गाँव में इनकी मूर्तियां बनाई जाती [illegible]

कालाग[illegible] [illegible] भैरों के दो रूप हैं। इनके
साथ [illegible] रहती है। पुछेल, डाकल,
[illegible] ने है। कुत्ते का वाहन इनका है।
[illegible] होते हैं। इनके
[illegible] रहता है।

'कोठे तो थाजा बाजिया कँवरजी
कोठे तो गेरया छै निशान
को महाराज अम्बर बड़ी।'

पाबूजी का मेला—पाबूजी के पिताजी का नाम धाँधलजी था। ये राठौड़ वंश में पैदा हुए थे। फलौदी से लगभग १८ मील दूर कोलूगढ़ में इनका मंदिर है जहाँ प्रतिवर्ष बड़ा भारी मेला भरता है। इसमें पाबूजी के भोपे बहुत बड़ी संख्या में इकट्ठे होते हैं। पाबूजी नायकों के इष्ट देव हैं। इनका जन्म सं० १३४१ के लगभग और मृत्यु १३८३ के लगभग मानी जाती है। ये वचन के बड़े पालक थे और अपने वचन को निभाते हुए ही काम आये थे। अपने विवाह के समय भाँवर ले हुए ये बीच में ही चले आये। इनका विवाह अमरकोट में हो रहा गायों की रक्षा में काम आने के कारण ये लोकजीवन में देव पूजे जाते हैं। अपने वचन की पूर्ति में ये लंकथली से साँ (ऊँटों का टोळा) भी लाये थे। ये बड़े वीर और साहसी देवड़ों और डोडयाना के गोड क्षत्रियों पर विजय पा स्मृति में बहुत से पवाड़े बने हुए हैं। भोपे इनको रात भ हैं। यह पाबूजी की पड़ कहलाती है। भो बसे हुए हैं और राजस्थान के कई रहते हैं। ये अपने साथ एक वि के जीवन सम्बन्धी कई लम्बी होती है।

कपलेश्वर, बाड़मेर से ३२ मी स्थानों की परिक्रमा

पंचतीर्थी—ये भी परिक्रमा दी पहाड़ियों पर स्थित मेला लगता है एकत्रित होते

ये इस प्रकार से हैं (१) नारसिंही (एकलिंगजी) (२) अम्बा माता (३) आवड़ माता (रीछेड़) (४) देवल ऊनवा माता (५) चामुण्ड माता (६) कालिका माता (चित्तौड़) (७) राठासण (८) बाणमाता (९) इडाणी-माता (लोदा)। राठासण (एकलिंगजी) भालों की कुल देवी है और बाणमाता (भुवानी की भागल) उदयपुर के महाराणाओं की कुलदेवी। इनमें अम्बामाता विशेष विख्यात है। इसका स्थान केलवाड़ा, कुम्भलगढ़ पास है। भील लोग इसके आगे गौरी का नृत्य करते हैं। गौरी नृत्य की कहानी में इसका प्रमुख भाग रहता है। इन देवियों के मंदिर हैं और सभी पर अलग अलग बहुसंख्या में गीत गाये जाते हैं। वोराजमाता का स्थान राजनगर के पास है। इसके मेले में भील लोग नाचते हैं।

धुंधलाज माता का स्थान कांकरोली के पास है। इसका मेला जेठ सुदी ६ को भरता है। इसके पुजारी बलाई हैं। वे जीभ में त्रिशूल घुमा कर परचा देते हैं। वोरज माता के यहां गाया जाने वाला गीत इस प्रकार है—

'माजी थारा ए मंदर में ढाक डेरू बाजे हो।
माजी, दूरा तो देसाँ सूँ थारे घणा जातरी आवे हे मा।

कुछ महिलाएं मानवीय शरीर से देवी रूप में पहुँच गईं और देवी के समान ही उनकी पूजा होती है। इनके यहां भी साधारणतया नवरात्रा में मेला लगता है। ये देवियाँ हैं एलवा (डूंगला), आवरी, मोतला (घोसुंडा), सातुमाता (देवगढ़), भरकमाता (लालोदा), लालाहूमां (पूठोली)। ये भी चमत्कार पूर्ण देवियाँ मानी जाती हैं।

चारभुजा—ये विष्णु भगवान हैं। इनका स्थान लगभग सभी गांवों में इधर मिलता है। इनका जन्माष्टमी को मेला भरता है। जन्माष्टमी कृष्ण भगवान का जन्म दिवस है और वे विष्णु भगवान के अवतार माने जाते हैं। हर दशमी को गांव में विमान निकलता है। उसके सामने गाने बजाते वैरागी साधु और गांव के भक्त गाते गाते निकलते हैं। इन पर भजन रहते हैं। ये भजन निर्गुणी और सगुणी दोनों प्रकार के होते हैं। गढ़बोर इनका प्रसिद्ध स्थान है।

मातादेव—यहां 'मसानिया का मेला' होता है। भादवा सुदी पूनम को यह भरता है। इसमें सभी जातियां आती हैं। [illegible] इसका आदर होता है। दूर दूर से लोगों को [illegible] भी होती है। [illegible]

भदेसर स्थान पर इनका मेला भरता है। हर गांव में इनका स्थान मिलता है। नाथों में इनकी अधिक गिनती है। हाथ में गरज घोट और मुंडी रहती है। डाकिन का काटा हुआ माथा चोटी पकड़ के रखते हैं। त्रिशूल भी ये धारण करते हैं। गोराजी का मेला राजनगर में भरता है। भैरूँ के इधर वाँक्याजी, मसयाणजी (सनवाड़ स्थान) खोड़ाजी, राड़ाजी आदि रूप पूजे जाते हैं।

नाग—(ताखाजी) इनको धर्मराजकुमार कहते हैं। गाडरी लोग भी इन्हें पूजते हैं। भील लोग इनकी पूजा करते हैं और वे ही इनके भोपे रहते हैं। इनकी पूजा मीठी होती है। लोग पुजारियों को गोल (अंगूठी बींटी, छाप) पहनाते हैं। चाँरी भी पहनाते हैं। भेंट में नारियल और चूरमा रहता है। भोपे भाव (कम्पन) में आते हैं। इनकी मूरत केसरिया नाथ में विशेषतः बनती है। भादवे के महीने में जागरण होता है। चौथ से जागरण शुरू होता है और नवमी तक रहता है। इनके पुजारी भोपे, गूजर, ब्राह्मण, भील, गाडरी और बलाई होते हैं। इनका एक गीत दिया जा रहा है—

> 'लेर उतारो काला नागजी,
> आज थानै ऊभी नै मालण देवै ओलमाँ।
> आज म्हारी बाड़याँ में हुयो छै बगाड़ ओ,
> फुलड़ाँ रा भारा।'

किसी को साँप के काट खाने पर इनके यहाँ ले जाया जाता है।

बउल्यो सींधवो—देवल ऊनेव में इसका स्थान है। यहाँ एक बड़ का पेड़ है। यह देवियों का देवता माना जाता है और इस स्थान पर तैंतीस करोड़ देवी देवताओं का वास माना जाता है। आसोज महीने के शुक्ल पक्ष की १० को यहाँ मेला लगता है और गीत गाये जाते हैं। यह पेड़ बहुत पुराना माना जाता है। कहा जाता है कि इसी पेड़ को देवी अम्बा ने ६ लाख बालक काटकर चढ़ाये थे और पाताल लोक से वासक नाग से वह इसे माँग कर लाई थी।

देवी के भिन्न-भिन्न रूप—दुर्गा के भिन्न-भिन्न रूप यहाँ मिलते हैं। इनका मेला नवरात्रा में भरता है। इनके बकरे और भैंसे की बलि चढ़ाई जाती है। इन सभी के गीत गाये जाते हैं। देवी के भिन्न-भिन्न

न इस प्रकार से है (१) नारसिंही (एकलिंगजी) (२) अम्बा माता (३) धनज माता (रीछेड़) (४) देवल ऊनवा माता (५) चामण्ड माता (६) कालिका माता (चित्तौड़) (७) राठासण (८) धाणमाता (९) इडाणे-माता (लोहा)। राठासण (एकलिंगजी) झालों की कुल देवी है और बाणमाता (सुखानी की भागल) उदयपुर के महाराणाओं की कुलदेवी। इनमें अम्बामाता विशेष विख्यात है। इसका स्थान केलवाड़ा, कुम्भलगढ़ पास है। भील लोग इसके आगे गौरी का नृत्य करते हैं। गौरी नृत्य की कहानी में इसका प्रमुख भाग रहता है। इन देवियों के मंदिर हैं और सभी पर अलग अलग वहुसंख्या में गीत गाये जाते हैं। बोराजमाता का स्थान राजनगर के पास है। इसके मेले में भील लोग नाचते हैं।

धुंधलाज माता का स्थान कांकरोली के पास है। इसका मेला जेठ सुदी ६ को भरता है। इसके पुजारी बलाई हैं। ये जीभ में त्रिशूल चुभो कर परचा देते हैं। बोरज माता के यहां गाया जाने वाला गीत इस प्रकार है—

'माजी थारा ए मदर में ढाक ढेरू बाजे हो।
माजी, दूरा तो देसाँ सूं थारे घणा जातरी आवे है मा।

कुछ महिलाएं मानवीय शरीर से देवी रूप में पहुंच गईं और देवी के समान ही उनकी पूजा होती है। इनके यहां भी साधारणतया नवरात्रा में मेला लगता है। ये देवियां हैं एलवा (डूंगला), आवरी, मोतला (घोसुंडा), सालुमाता (देवगढ़), भरकमाता (लालोडा), लालाठूनां (पूठोली)। ये भी चमत्कार पूर्ण देवियां मानी जाती हैं।

चारभुजा—ये विष्णु भगवान हैं। इनका स्थान लगभग सभी गांवों में इधर मिलता है। इनका जन्माष्टमी को मेला भरता है। जन्माष्टमी कृष्ण भगवान का जन्म दिवस है और ये विष्णु भगवान के अवतार माने जाते हैं। हर दशमी को गांव में विमान निकलता है। इसके सामने गाते बजाते वैरागी साधु और गांव के भक्त लोग चलते निकलते हैं। इन पर भजन रहते हैं। ये भजन निर्गुणी और सगुणी दोनों प्रकार के होते हैं। गढ़बोर इनका प्रसिद्ध स्थान है।

कामादेव—यहां 'सरावण का सा मेला' होता है। भादवा सुदी पूनम को यह भरता है। इसमें सभी जातियां भाग लेती हैं। गांव गांव का इनका आयोजन होता है। [illegible] से होली को [illegible] भी होती है। [illegible]

परन्तु यहां खड़ी (तोड़ी) की जाती है। गान और नाच मूर होते हैं। इनके १०-१२ गीत मिलते हैं।

माध्री कुंडिया—यहां शंकर का मेला होता है। यहां रामधारियां की जाती हैं। मृतक के फूल (अस्थि, दांत) भी चढ़ाये जाते हैं। इसमें रामदेवजी के भगत झूमर नृत्य करते हैं जिसमें एक स्त्री और एक पुरुष युगल रूप में होते हैं। गीत इस प्रकार है—

'भोली सी भीलनिया नाचे भोला नाथ के संग,
मैं नाचूं मेरा मन नाचे, मिले अंग से अंग।'

श्रीनाथजी का मेला—यह दीवाली के दूसरे दिन भरता है। नाच, गीत, भजन-भाव बहुत होते हैं।

हरियाली अमावस्या का मेला—यह सावण के महीने में भरता है। उदयपुर स्थित फतहसागर की रमणीक पाल पर यह जुड़ता है। इसमें दूसरे दिन स्त्रियां इकट्ठी होती हैं। इसमें सावन के गीत गाये जाते हैं।

ऋषभदेव—उदयपुर से ३६ मील दक्षिण में स्थित धूलेव कसबे में यह प्रसिद्ध जैन मंदिर है। प्रति वर्ष हजारों यात्री इसके दर्शन के लिये आया करते हैं। इस मंदिर में केशर चढ़ाई जाती है अतएव इसे केसरियाजी भी कहते हैं।

वेणेश्वर—यह डूंगरपुर से ४० मील दूर बांसवाड़ा राज्य की सीमा पर स्थित है। यहां सोम और माही नदियों के संगम पर वेणेश्वर महादेव का मंदिर है। शिवरात्री के अवसर पर यहां बड़ा भारी मेला लगता है और दूर दूर से हजारों यात्री दर्शन के लिये आते हैं। नदियों के मिलने पर पानी भर जाता है और महादेव का स्थान एक द्वीप पर रह जाता है जो सुन्दर प्रतीत होता है।

धुटिया अम्बे—यह चैत्र वदी अमावस्या को भरता है। इसमें भील लोग नृत्य करते हैं।

रणछोड़जी का मेला—मोटा गांव के पास होली के चार दिन पूर्व से होलिकादहन तक चलता है।

गणगौर का मेला—उदयपुर शहर में गणगौर का मेला पहले बड़ी शान से मनाया जाता था किन्तु अब बहुत कम उत्साह रह गया है।

जयपुर डिवीज़न

जयपुर जिला

गलता—जयपुर जिले में प्रसिद्ध मेला गलताजी का है। यह शहर के पूर्व में पहाड़ियों के बीच एक प्राकृतिक जगह पर है। इस स्थान को विकसित करने का भी प्रयत्न किया गया है और इसको सुन्दर और सुविधा पूर्ण बनाने की चेष्टा की गई है। यहां गालव ऋषि का आश्रम बतलाया जाता है। कई कुण्ड हैं और एक झरना बराबर ऊंचाई से गिरता रहता है। इसी स्थान पर यात्री लोग स्नान कर पुण्य लाभ समझते हैं। यहां वर्ष में एक बार मेला भरता है, जिसमें दूर-दूर से यात्री आते हैं। इसमें धार्मिक प्रकृति के भजन और हरजस स्त्रियां गाती हैं। बहुधा तीर्थ स्थानों की यात्रा पैदल और नंगे पांव ही की जाती है।

जगदीशजी का मेला—यह सांगानेर में आषाढ़ सुदी १० को भरता है और इसमें बड़ी संख्या में लोग एकत्रित होते हैं।

गणगौर—जयपुर शहर में यह मेला बड़ी धूमधाम से भरता है और हजारों की संख्या में लोग इस मेले का आनंद उठाते हैं। इसमें गणगौर की प्रतिमाएं निकलती हैं। महाराजा के कर्मचारी राजसी पोशाक में शरीक होते हैं।

सवाई माधोपुर जिला

श्री महावीरजी—हिंडोन में जैनियों का बड़ा भारी मेला श्री महावीरजी का लगता है। इस मेले में गूजर, मीणे, आदि जातियां नृत्य करती हैं और गीत गाती हैं। ये गीत रसिया और कन्हैया दो प्रकारों के रूप में मिलते हैं। भूत प्रेतों से ग्रसित लोगों को उनसे मुक्ति दिलाने के लिये गीत गाये जाते हैं और ढोल बजाये जाते हैं।

कैलादेवी—यह करौली में भरता है और १५ दिन तक रहता है। यह चैत वदी १२ से चैत सुदी १२ तक बराबर चलता है। एक लाख की संख्या में लोग इसमें भाग लेते हैं। यह धार्मिक मेला है अतएव इसमें गाये जाने वाले गीत धार्मिक प्रकृति के ही होते हैं।

[illegible]—यह पंद्रह दिन भरता है और इसमें पशुओं

गणेशजी—यह भादवा सुदी ४ को रणथम्भोर में भरता है। रणथम्भोर का किला राजस्थान में विख्यात है। यह सवाई माधोपुर स्टेशन से लगभग ३ मील की दूरी पर है और इसे देखने के लिये बहुत दूर-दूर से यात्री आते हैं। हमीर यहां राज्य करते थे। इस मेले में ५०,००० के लगभग यात्री आते हैं। रणथम्भोर के गणेशजी का स्थान राजस्थान में इतना प्रसिद्ध है कि गीतों में वही स्थान लिया गया है, उदाहरणार्थ—

'गढ रणत भंवर सैं आश्यो विनायक करो यैनें मन चोती विड्‌ड़ी।'

काली का मेला—(चोथ माता) यह बरवाड़ा में माघ सुदी ४ को भरता है। इसमें करीब आधा लाख आदमी एकत्रित होते हैं।

जिला झुंझुंनू और सीकर

श्यामजी—यह रींगस से १० मील की दूरी पर भरता है। खाटू के श्यामजी का भी उधर के इलाके में बड़ा नाम है। यह फागुन सुदी ११-१२ और जेठ सुदी ११-१२ को भरता है। सामान्य विचारधारा यह है कि यह श्रीकृष्ण भगवान की स्मृति में भरता है। एक विचारक के मतानुसार यह बर्बरीक जो भीम का पौत्र था उसकी स्मृति में मनाया जाता है। कहा जाता है कि औरंगजेब ने इस पर भी चढ़ाई की थी और मंदिर को तोड़ दिया था। श्यामजी की पूजी जाने वाली मूर्ति का रूप हमने रामगढ़ में देखा था। उसमें श्यामजी घोड़े पर सवार राजपूती वेश में हैं। इससे यह ज्ञात होता है कि वे कोई राजपूत क्षत्रिय थे। पंडित झाबरमलजी शर्मा के अनुसार श्यामजी के पुजारी चौहान क्षत्रिय हैं इसलिये अनुमान होता है कि श्यामजी चौहान काल का क्षत्रिय रहा हो। इनके चूरमे का चढ़ावा है। जात, जड़ूले के लिये स्त्री पुरुष इनके यहां जाते हैं।

जीणमाता—यह स्थान गोरयां स्टेशन से लगभग १० मील की दूरी पर है जहां मोटर जाती-आती रहती है। जीणमाता के यहां बहुसंख्यक तिवारे-बने हुए हैं। जात जड़ूले वाले यात्री यहां पर दो बार वर्ष में दोनों नवरात्राओं पर मेले में आते हैं। यह एक प्राचीन ऐतिहासिक स्थान है। इसके शराब और बकरा चढ़ता है। मूर्ति करीब ४॥ फीट बड़ी है। दुर्गा के एक रूप में इसकी पूजा होती है। इसके अखंड दीपक जलना रहता है। यात्रियों की संख्या लगभग १ लाख से ऊपर चली जाती है। इसमें माली लोग चंग पर गीत गाते हैं। थोड़ी

दूर पर हर्ष नामक प्राचीन मंदिर है जहां भैरव की पूजा होती है। इनकी आगम के सम्बन्ध की कहानी भी प्रचलित है। कुछ जानियों की जीण कुलदेवी के रूप में पूजी जाती है। इस पर भी बादशाह की फौज चढ़ कर आई थी किन्तु इस प्रकार की एक किंवदन्ती है कि भौंरों ने फौज को आगे बढ़ने नहीं दिया। घोड़ों को भौंरों ने बुरी तरह डंक द्वारा पीड़ित कर दिया। हर्ष और जीण के सम्बन्ध में लोक वार्ता भी मिलती है—

जीण और हर्ष भाई बहिन थे। इनके माता पिता की मृत्यु छोटी उम्र में ही हो गई थी। माता पिता ने मरते समय हर्ष को जीण पर स्नेह बनाये रखने के लिए कहा था। हर्ष का विवाह हो चुका था, जीण कुँवारी ही थी। एक दिन पनघट पर जाते समय भौजाई ने जीण पर व्यंग कस दिया और जीण घर से चली गई। हर्ष ने बहुत मनाया पर जीण वापिस नहीं आई। हर्ष भी उसके ही साथ हो लिया।

कलजुग की श्रे देवी, थरहर तो थरहर डूंगर कांपिया।
जीण जुग वाली श्रे, ढाई तो अक्षर भैरूं ने यूं कह्या।
सामैं तो बैठ्या लागै पाव।
जामण कारे जाया, छेकड़ देय बैठां रे फेरां पीठड़ी।

एक मूर्ति में जीण ने हर्ष को पीठ ही दे रखी है। यह कथा बड़ी प्रभावोत्पादक है।

रामदेवजी—इनका मेला नवलगढ़ कसबे में भादवा सुदी ९,१०,११ को तीन दिन तक रहता है। यात्रियों की संख्या एक लाख से ऊपर रहती है। मेले में दूकानें भी लगती हैं और खेल कूद आदि की प्रतियोगिताएं भी होती हैं। नाटक भी अभिनीत किया जाता है। पुरुष और स्त्रियां नारियल, मिठाई, पैसा आदि चढ़ाते हैं। मेले में अच्छी व्यवस्था देखी जाती है और कथा-गीत भी होते हैं। रामदेवजी के विशेष भक्त चमार लोग हैं जो उनकी भक्ति में सामूहिक रूप से गीत गाते हैं।

केसरिया—भादवा बदी ८ को केसरिया धोकने के लिये स्त्रियां अपने बच्चों को साथ लिये जाती हैं। केसरियाजी के स्थान पर सर्प की ही प्रतिमा है। अवश्य कालान्तर में इनका सर्प से सम्बन्ध कर दिया गया। सम्भवतः गोगाजी चौहान से इनका कोई सम्बन्ध रहा हो। वे कोई क्षत्रिय ही रहे होंगे क्योंकि लोगों में 'कुंवर' शब्द से इन्हें सम्बोधित किया जाता है। एक लेखक के कथनानुसार इनकी जाति [illegible]

थी। गोगा नवमी से एक दिन पूर्व इनका मेला लगता है, जहां खीर, चूरमा, पैमा इनको चढ़ाया जाता है। शेखावाटी के प्रायः सभी कसबों में केसरियाजी की पूजा होती है।

लोहार्गल का मेला—यह स्थान नवलगढ़ से ६ कोस दक्षिण में पहाड़ों के बीच में स्थित है। गोगानवमी अर्थात् भादवा वदी ६ से इसकी यात्रा पर यात्री निकल पड़ते हैं और अमावस्या को मेला लगता है। यात्री मालखेतजी का अमावस्या को दर्शन करते हैं। दान पुण्य भी होता है। परिक्रमा में साधुओं की टोलियां बैठी रहती हैं। लोहार्गल अथवा मालखेतजी की परिक्रमा २४ कोस की मानी जाती है, जो कोई तीन दिन में कोई पांच दिन में कोई दो दिन में पूरी कर देता है। रास्ते में कई दर्शनीय स्थान आते हैं जिनमें किरोड़ीजी, सकराय, कालाचारी की घाटी, खाकी अखाड़ा, शोभावती, नीमड़ी की घाटी आदि हैं। सारी रात भर भजन और गाने होते हैं। पुनः ३-४ बजे सुबह स्त्रियां गीत गाती हुई यात्रा शुरू कर देती हैं। गीत धार्मिक होते हैं। अमावस्या के दिन एक कुंड में स्नान होता है। यहां गोमुखी से एक झरना बराबर झरता रहता है। इसमें १। लाख के लगभग यात्री इकट्ठे होते हैं और बीकानेर, जोधपुर, हिसार, रोहतक आदि सुदूर स्थानों से भी यात्री आते हैं। इसमें राजपूत महिलाएं भी बहुत आती हैं। यहां सैकड़ों की संख्या में मंदिर बने हुए हैं। यह एक रामणीय स्थान है।

संकराय—उदयपुर शेखावाटी से संकराय तक पक्की सड़क बनी हुई है। नवलगढ़ से उदयपुर ६ कोस की दूरी पर है और सँकराय फिर पाँच कोस आगे रह जाती है। इसके पुजारी नाथ हैं जो बहुत सम्पन्न हैं। यहां बहुत सुन्दर मकान बने हुए हैं। नवरात्रा को वर्ष में दो बार मेला आता है। सँकराय में अधिकतर ब्राह्मण और बनिये ही इस अवसर पर विशेष जाते हैं। मोटर कारों का इन दिनों तांता बंध जाता है। संकराय एक बहुत ही रमणीक स्थान है और संभवतः शेखावाटी का स्वर्ग है। बहुत दूर तक करने के लाल लाल फूल इस प्रकार उगे हुये हैं, मानों उन्हीं का जंगल हो। यहां धार्मिक भावों के भजन और गीत गाये जाते हैं। यहां शिला लेख भी पाये जाते हैं। सकराय की देवी दुर्गा के एक रूप में पूजी जाती है।

बीकानेर डिविजन

गोगाजी का मेला—यह भादवा वदी ६ को गोगामेड़ी नामक स्थान पर भरता है और तीन दिन रहता है। यहाँ लोग तालाब का पानी ही पीते हैं और मिट्टी के टीलों पर रात्रि को सोते हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि नीचे सोने वाले को साँप नहीं काट सकता। इस मेले के समय बीकानेर के सरकारी कर्मचारी आया करते हैं। सरकस, खेल कूद, आदि के प्रदर्शन भी होते थे। इसमें ऊटों और बैलों का भी बहुत बड़ा व्यापार होता हैं। ऊटों की दौड़ होती है। यह स्थान नौहर भादरा के पास है। दूकानें भी लगती हैं। करीब १। लाख आदमी इसमें इकट्ठे होते हैं। गोगाजी का जन्म ददरेवा नामक स्थान पर हुआ था जो बीकानेर डिविजन के राजगढ़ स्थान से ८ कोस की दूरी पर है। यह चौहान क्षत्रिय थे। इनका विवाह पाबूजी राठौड़ की भतीजी केलण बाई के साथ हुआ था। कहा जाता है कि गोगाजी गोरख सम्प्रदाय के अनुयायी थे। चौदहवीं शताब्दी के अंतिम भाग में इनकी मृत्यु मानी जाती है। ये पाबूजी राठौड़ के समकालीन थे। गोगाजी की पूजा सर्प के देवता के रूप मे भी होती है। जिसको सर्प काट खाता है उसे गोगाजी के स्थान पर ले जाते हैं और सर्पविष वहाँ दूर किया जाता है। गोगाजी के भक्त मेले की यात्रा में यह गीत गाते हैं—

> पूरब में रै सँग चालियो रै भगतों,
> सँग मैड़ी में जाय।
> ओ पीर मनै तेरो उमावो हो,
> पहलो तो वासो हद बीच में रै भगतों।
> दूजी दिलड़ी के माँय,
> ओ पीर मनैं तेरो उमावो हो।

करणी माता—इनका चारण कुल में जन्म हुआ था। इन्होंने देशनोक नगर की नींव डाली थी। ये बड़ी पराक्रमी स्त्री थी और देवी के रूप में आज इनकी बड़ी मान्यता है। स्वर्गीय बीकानेर महाराज करणीजी के परम भक्त थे। इनके गाँव में कई प्रकार की मर्यादाएँ निभाई जाती हैं। करणीजी ने १५० वर्ष की उम्र पाई बतलाते हैं। चारणों में इनको बहुत बड़ी मानता है। चारण स्त्रियाँ इसमें धार्मिक गीत गाती हैं। यह

मेला चैत बदी १ से ९ तक ९ दिन और आसोज सुदी १ से ९ तक ९ दिन भरता है।

कोलायत—बीकानेर से लगभग ३९ मील दक्षिण-पश्चिम में कोलायत तालाब है। यहाँ कपिल मुनि का आश्रम बताया जाता है। यहाँ प्रति वर्ष हजारों की संख्या में यात्री और साधु-संत आते हैं। मेले में भजन-भाव होते हैं और साधुओं की बड़ी कदर की जाती है। कार्तिक सुदी १४-१५ को दो दिन बड़ा जबरदस्त मेला भरता है। लगभग १ लाख की संख्या में यात्री इकट्ठे होते हैं।

ददरेवा का गोगाजी का मेला—ददरेवा गोगाजी की जन्म-भूमि मानी जाती है अतएव यहाँ भादवा-बदी ६-७ से भादवा सुदी ९ तक बड़ा भारी मेला लगता है।

गणगौर—यह बीकानेर शहर में चैत सुदी ३-४ को भरता है।

रामदेवजी—यह तारा नगर में चैत सुदी १० और राजगढ़ में भादवा सुदी ९ को भरता है।

मावलियाजी का मेला—यह धामला (सरदारशहर) में चैत सुदी १ से आसोज सुदी १ तक १५ दिन भरता है।

जोमाजी का मेला—तहसील नोखा मोजा मुकाम में आसोज बदी अमावस को भरता है। इसमें विश्नोई जाति के लगभग ४०-५० हजार आदमी एकत्रित होते हैं।

हनूमानजी का मेला—चैत सुदी १५ को पूनरासर (डूँगरगढ़) में यह तीन दिन तक भरता है।

पीरजी का मेला—गजनेर स्थान पर क्वार सुदी ९ को मुसलमानों का यह मेला भरता है।

भैंरूजी का—भादवा सुदी १२ को कोडमसर मे भरता है।

श्रीलालेश्वरजी शिवबाड़ी—सावन सुदी ७-१० को चार दिन भरता है।

जेठा भुरा—यह पीर का मेला है और भादवा बदी ८ को भरता है। इसमें मुसलमान सम्मिलित होते हैं।

कुंभ—यह अनूपगढ़ में पोष बदी अमावस्या को भरता है।

बड़ा परण—यह विजय नगर में वैशाख की एकम् को भरता है।

सालासर—यह चूरू जिले में है और यहाँ हनूमानजी का मेला

कोटा डिविजन

बारां का डोल (एकादशी), बूंदी की तीज, कोटे का दशहरा, सामोद का नहान (चैत) बड़े प्रसिद्ध हैं। इन पर विशाल मेले लगते हैं। सामोद में वैशाखी पर बैलों का भी मेला लगता है। गूगे पीर का और कुंवारजी का मेला इंदरगढ़ में भरते हैं। केशोरायजी का मेला- पाटन (बूंदी) में भरता है।

सीताबाड़ी का मेला—जेठ मास की अमावस्या को भरता है। इसमें सहरिये विशेष रूप से सम्मिलित होते हैं। कोली, मीणों, किराड़ तथा गूजर जातियां भी इसमें एकत्रित होती हैं। गीतों का कार्यक्रम रहता है।

तेजाजी का मेला—कोटा के तालाब के पास तेजा दशमी को भरता है।

दोल यात्रा—यह मेला बारां में भादों सुदी १०-१५ को भरता है।

वैसाखी का मेला—यह मेला वैसाख सुदी ७-१५ तक भरता है।

मेला कार्तिक—यह पाटन (जिला झालावाड़) नामक स्थान पर चंद्रभागा नदी पर कार्तिक सुदी ११ से अगहन बदी ५ तक भरता है। चंद्रभागा बड़ी पवित्र नदी समझी जाती है। हजारों यात्री इस अवसर पर पूर्णिमा का स्नान करने के लिये आते हैं।

वैशाख पाटन—यह गौतमी सागर स्थान पर लगता है। वैसाख सुदी ११ से जेठ बदी ५ तक यह रहता है। व्यापारिक दृष्टि से ही यह लगता है। यहां कारीगरी की वस्तुएं विक्रय के लिए आती हैं।

मेला वसंत पचमी—यह माघ सुदी ११ से फाल्गुन बदी ५ तक लगता है। मंडी में इस अवसर पर अच्छा व्यापार होता है।

मेला महा शिवरात्रि—मनोहर थाना नदी के किनारे यह फाल्गुन वदी १२ से फाल्गुन सुदी ४ तक लगता है। इसमें हजारों यात्री शिवजी के दर्शन हेतु आते हैं।

वसंत पर्व—एकलेरा स्थान में माघ सुदी २ से फाल्गुन सुदी २ तक भरता है। इसमें प्राकृतिक सौन्दर्य का आनंद लिया जाता है।

मेला यशवंत नवरात्री—चौमहला व गंगाधर के बीच मैदान में आसोज सुदी ११ से कार्तिक वदी ४ तक सामाजिक और व्यापारिक दोनों दृष्टि से लगता है।

मेला रामनवमी—यह भी चौमहला व गंगाधर के बीच मैदान में चैत्र सुदी ११ से वैसाख वदी ५ तक लगता है। भगवान राम के जन्म दिवस और व्यापारिक महत्त्व से यह मेला लगता है।

अजमेर

पुष्करजी का मेला—अजमेर नगर से उत्तर पश्चिम की ओर लगभग ७ मील की दूरी पर पुष्कर पहाड़ियों में स्थित है। यहां अजमेर से मोटरें जाती रहती हैं। यह तीर्थराज कहलाता है। कार्तिक की पूर्णिमा को यहां बड़ा भारी मेला लगता है। पशुओं का भी व्यापार होता है। यहां ब्रह्माजी का भी मंदिर है जो भारतवर्ष में एक स्थान पर ही है। यहां के कुंड में स्नान किया जाता है। पास मे ही सावित्री का मंदिर भी बना हुआ है। यह हिन्दुओं का पवित्र स्थान माना जाता है।

ख्वाजा साहब सन ११४२ में मध्य एशिया मे जन्मे थे। अजमेर मे ये सन् ११६६ के लगभग आये और सूफीमत का प्रचार इनका उद्देश्य था। ये अजमेर में ७० वर्ष रहे और १२३६ में इन्होंने अपना शरीर छोड़ा। जिस जगह इनको दफनाया गया वहां इनकी दरगाह बनी हुई है। रजब के महीने में पहले दिन से छठे दिन तक इनकी निर्वाण तिथि के उपलक्ष में एक बड़ा भारी मेला लगता है। इसमें भारतवर्ष से बाहर के भी मुसलमान आते हैं। इस अवसर पर कव्वालियों के दंगल आयोजित होते हैं।

कोटा डिविजन

बारां का डोल (एकादशी), बूंदी की तीज, कोटे का दशहरा, सामोद का नहान (चैत) बड़े प्रसिद्ध हैं। इन पर विशाल मेले लगते हैं। सामोद में वैशाखी पर बैलों का भी मेला लगता है। गूगे पीर का और कुंवारजी का मेला डूंगरगढ़ में भरने हैं। केशोरायजी का मेला- पाटन (बूंदी) में भरता है।

सीताबाड़ी का मेला—जेठ मास की अमावस्या को भरता है। इसमें सहरिये विशेष रूप से सम्मिलित होते हैं। कोली, मीणों, किराड़ तथा गूजर जातियां भी इसमें एकत्रित होती हैं। गीतों का कार्यक्रम रहता है।

तेजाजी का मेला—कोटा के तालाब के पास तेजा दशमी को भरता है।

दोल यात्रा—यह मेला बारां में भादों सुदी १०-१५ को भरता है।

वैसाखी का मेला—यह मेला वैसाख सुदी ७-१५ तक भरता है।

मेला कार्तिक—यह पाटन (जिला झालावाड़) नामक स्थान पर चंद्रभागा नदी पर कार्तिक सुदी ११ से अगहन बदी ५ तक भरता है। चद्रभागा बड़ी पवित्र नदी समझी जाती है। हजारों यात्री इस अवसर पर पूर्णिमा का स्नान करने के लिये आते हैं।

वैशाख पाटन—यह गौतमी सागर स्थान पर लगता है। वैसाख सुदी ११ से जेठ बदी ५ तक यह रहता है। व्यापारिक दृष्टि से ही यह लगता है। यहां कारीगरी की वस्तुएं विक्रय के लिए आती हैं।

मेला बसंत पंचमी—यह माघ सुदी ११ से फाल्गुन बदी ५ तक लगता है। मंडी में इस अवसर पर अच्छा व्यापार होता है।

मेला महा शिवरात्रि—मनोहर थाना नदी के किनारे यह फाल्गुन बदी १२ से फाल्गुन सुदी ४ तक लगता है। इसमें हजारों यात्री शिवजी के दर्शन हेतु आते हैं।

बसंत पर्व—एकलेरा स्थान में माघ सुदी २ से फाल्गुन सुदी २ तक भरता है। इसमें प्राकृतिक सौन्दर्य का आनंद लिया जाता है।

मेला यशवंत नवरात्री—चौमहला व गंगाधर के ... आसोज सुदी ११ से कार्तिक बदी ५ तक ... दोनों दृष्टि से लगता है।

मेला रामनवमी—यह भी चौमहला व गंगाधर के बीच मैदान में चैत्र सुदी ११ से बैसाख वदी ५ तक लगता है। भगवान राम के जन्म दिवस और व्यापारिक महत्त्व से यह मेला लगता है।

अजमेर

पुष्करजी का मेला—अजमेर नगर से उत्तर पश्चिम की ओर लगभग ७ मील की दूरी पर पुष्कर पहाड़ियों में स्थित है। यहां अजमेर से मोटरें जाती रहती हैं। यह तीर्थराज कहलाता है। कार्तिक की पूर्णिमा को यहां बड़ा भारी मेला लगता है। पशुओं का भी व्यापार होता है। यहां ब्रह्माजी का भी मंदिर है जो भारतवर्ष में एक स्थान पर ही है। यहां के कुंड में स्नान किया जाता है। पास मे ही सावित्री का मंदिर भी बना हुआ है। यह हिन्दुओं का पवित्र स्थान माना जाता है।

ख्वाजा साहब सन् ११४२ में मध्य एशिया में जन्मे थे। अजमेर में ये सन् ११६६ के लगभग आये और सूफीमत का प्रचार इनका उद्देश्य था। ये अजमेर में ७० वर्ष रहे और १२३६ में इन्होंने अपना शरीर छोड़ा। जिस जगह इनको दफनाया गया वहां इनकी दरगाह बनी हुई है। रजब के महीने में पहले दिन से छठे दिन तक इनकी निर्वाण तिथि के उपलक्ष में एक बड़ा भारी मेला लगता है। इसमें भारतवर्ष से बाहर के भी मुसलमान आते हैं। इस अवसर पर कव्वालियों के दंगल आयोजित होते हैं।